सीजीएल–101

चयनित गढ़वाली पद्य

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्याशाखा
(क्षेत्रीय भाषाएं विभाग)
फोन नं0 05946-261122, 261123
टोल फ्री नं0 18001804025
इ–मेल info@uou.ac.in
http://uou.ac.in

(गढ़वाली भाषा में प्रमाणपत्र कार्यक्रम)

अध्ययन बोर्ड

प्रोफेसर एच. पी. शुक्ल निदेशक, मानविकी विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय श्री रमाकांत बेंजवाल लोक साहित्यकार एवं लेखक, देहरादून, उत्तराखण्ड। श्री देवेश जोशी, लोक साहित्यकार एवं लेखक, देहरादून, उत्तराखण्ड।	डॉ0 राकेश चन्द्र रयाल एसोसिएट प्रोफेसर पत्रकारिता एवं मीडिया अध्ययन विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय श्री धर्मेन्द्र नेगी लोक साहित्यकार, लोककवि एवं लेखक, पौडी गढ़वाल, उत्तराखण्ड। श्री गिरीश सुन्दरियाल लोक साहित्यकार, लोककवि एवं लेखक, पौडी गढ़वाल, उत्तराखण्ड।

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर एच. पी. शुक्ल निदेशक, मानविकी विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय श्री नरेन्द्र सिंह नेगी लोक गायक, लोककवि एवं साहित्यकार, पौडी गढ़वाल, उत्तराखण्ड। श्रीमती बीना बेंजवाल लोक साहित्यकार, लोककवि एवं लेखक, देहरादून, उत्तराखण्ड ।	डॉ0 राकेश चन्द्र रयाल एसोसिएट प्रोफेसर पत्रकारिता एवं मीडिया अध्ययन विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय श्री गणेश खुगशाल 'गणी' लोक साहित्यकार एवं लेखक, पौडी गढ़वाल, उत्तराखण्ड ।

पाठ्यक्रम संयोजन

डॉ0 राकेश चन्द्र रयाल
एसोसिएट प्रोफेसर
पत्रकारिता एवं मीडिया अध्ययन विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

इकाई लेखक

इकाई सं0	इकाई का नाम	लेखक का नाम
1	गढ़वाली पद्य का संक्षिप्त इतिहास	श्री गिरीश सुन्दरियाल
2	सदेई (गीत)– तारादत्त गैरोला	श्री धर्मेन्द्र नेगी
3	खुदेड़ बेटी (गीत)– भजन सिंह 'सिंह'	श्री गिरीश सुन्दरियाल
4	घोल, दैसत (कविता)– अबोधबंधु बहुगुणा	श्री धर्मेन्द्र नेगी
5	उल्यारु जिकुड़ि (गीत)– कन्हैयालाल डंडरियाल	श्री गिरीश सुन्दरियाल
6	चम्म चमकि घाम, झूंतु तेरि जमादारि (गीत)– नरेन्द्र सिंह नेगी	श्री धर्मेन्द्र नेगी
7	ज्यून्दो खबेश, हिसाब (कविता)– सुरेन्द्र पाल	श्री गिरीश सुन्दरियाल
8	ढांगा से साक्षात्कार, नमस्कार (कविता)– नेत्र सिंह असवाल	श्री धर्मेन्द्र नेगी
9	बर्सु बाद, जगा पर (कविता)– मदन मोहन डुकलान	श्री गिरीश सुन्दरियाल
10	उरख्यालो, चुल्लों कि खातिर (कविता)– बीना बेंजवाल	श्री धर्मेन्द्र नेगी

पाठ्यक्रम सम्पादन

श्रीमती बीना बेंजवाल

लोक साहित्यकार, लोक कवि एवं लेखक, देहरादून, उत्तराखण्ड।

कॉपीराइट @/उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय।

संस्करणः प्रथम 2021

प्रकाशक : कुलसचिव, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, 263139 (नैनीताल)

इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या अन्य पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इकाई 1

गढ़वाली पद्य का संक्षिप्त इतिहास

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 गढ़वाली का आदिकालीन पद्य इतिहास

1.3.1 लोक गाथाएँ

1.3.2 लोक गीत

1.4 गढ़वाली काव्य का उद्भव व विकास

1.4.1 गढ़वाली कविता की प्रारम्भिक त्रिमूर्ति

1.5 गढ़वाली काव्य के उत्थान का वर्गीकरण

1.5.1 प्रथम उत्थान

1.5.2 द्वितीय उत्थान

1.5.3 तृतीय उत्थान

1.5.4 चतुर्थ उत्थान

1.5.5 पंचम उत्थान

1.6 अभ्यास प्रश्न

1.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

गढ़वाली भाषा में पद्य साहित्य की प्राचीन परम्परा है। उसका अपना गौरवमयी अतीत और स्वर्णिम वर्तमान है। जाहिर है भविष्य भी उज्ज्वल होगा। गढ़वाली लोक काव्य के अन्तर्गत लोकगीतों का विशिष्ट स्थान है। विशिष्ट इसलिए कि लोकगीत लोकाभिव्यक्ति के वे सरलतम स्वरूप हैं जिनसे लोक मानस तादात्म्य अनुभव करता है। इसलिए भी कि इनका वर्ण्य विषय लोक हृदय में परम्परागत रागात्मक मंथन के बाद सटीक अभिव्यक्ति पाता है। वर्ण्य विषय, भाषा शैली और संगीत की सम्पृक्ति के स्तर पर होने वाली इस गहन रागात्मक अभिव्यक्ति के सरलतम और सर्वग्राह्य होने के कारण इन गीतों की विशिष्टता स्वयं सिद्ध है। इसलिए इन गीतों ने गढ़वाली शिष्ट काव्य को वर्ण्य विषय, भाषा-शैली, अलंकार, चमत्कार अथवा सहजोक्ति अनेक स्तरों पर प्रभावित किया है। लोक गाथाओं के कथानकों का आश्रय अनेक कवियों ने ग्रहण किया है। जैसे सदेई (तारादत्त गैरोला), बाटा गोड़ाई (बलदेव प्रसाद शर्मा), नागरजा (कन्हैयालाल डंडरियाल) इस के अलावा भक्ति, धर्म, नीति, प्रेम, संघर्ष, जागरण, राष्ट्रीयता आदि अनेक भावों का वर्णन

गढ़वाली लोक गाथाओं व लोकगीतों में है ही जिन्हें कवियों ने अपनी-अपनी रचनाओं में स्थान दिया। गढ़वाली खुदेड़ गीतों और नारी पीड़ा की शिष्ट रचनाओं में तो बहुधा इतना साम्य है कि उन्हें पृथक-पृथक पहचान पाना मुश्किल हो जाता है।

गढ़वाली काव्य पर लोक काव्य के शिल्पगत प्रभाव से तो शायद ही कोई कवि बच पाया हो। अपनी अनेकों कृतियों में कवियों ने लोक धुनों पर आधारित छन्दों में अभिव्यक्ति प्रदान की है। अनेक स्वातंत्र्योत्तर कवियों की मुक्तक रचनाओं में भी लोक काव्य का छन्दगत प्रभाव देखा जा सकता है। गढ़वाली काव्य में प्रयुक्त होने वाली उपमाएँ लोक काव्य परम्परा द्वारा प्रदत्त उपमाएँ ही हैं। गढ़वाली काव्य की पृष्ठभूमि में लोक साहित्य के अलावा जो महत्वपूर्ण दृष्टिगोचर होता है वह है- भारतेन्दु युगीन खड़ी बोली साहित्य आन्दोलन, जब यह आन्दोलन खड़ी बोली की तरफ उन्मुख हुआ तो पढ़े-लिखे गढ़वालियों को अपनी मातृभाषा की याद आई और वे उसमें काव्य रचना की ओर उन्मुख हुए। तो ठीक वही कार्य महन्त हर्षपुरी गुसांई, लीलानन्द कोटनाला, हरिकृष्ण दौर्गादत्ति, सत्यशरण रतूड़ी, चन्द्रमोहन रतूड़ी एवं पं० भवानीदत्त थपलियाल गढ़वाली के लिए कर रहे थे। अतः गढ़वाली काव्य के उद्भव एवं विकास की पृष्ठभूमि में गढ़वाली लोक साहित्य व हिन्दी का खड़ी बोली साहित्य आन्दोलन स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के फलस्वरूप निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति की आशा व्यक्त की जाती है-

- गढ़वाली पद्य साहित्य के उद्भव एवं विकास की सामान्य जानकारी हो पायेगी।
- गढ़वाली कविता के अथवा काव्य के क्रमिक विकास को समझ पायेंगे।
- गढ़वाली पद्य साहित्य में प्रयुक्त विभिन्न विधाओं की जानकारी हो पायेगी।
- गढ़वाली काव्य के गहराई से अध्ययन की इच्छा जागृत हो पायेगी।

1.3 गढ़वाली का आदिकालीन पद्य इतिहास

आम तौर पर प्रत्येक लोक साहित्य मौखिक परम्परा के बल पर ही जीवित रहता है। गढ़वाली भी इसमें कोई अपवाद नहीं। गढ़वाली लोक साहित्य की परम्परा व इतिहास सदियों पुराना है। मांगळ, जागर, पंवाड़े तो एक हजार वर्ष से भी पुराने माने जाते हैं। यह हमारे समाज, सभ्यता व संस्कृति के प्राचीनतम व प्रामाणिक दस्तावेज हैं। यद्यपि इस तरह के पद्य लोक साहित्य का विपुल भण्डार दस्तावेजों के रूपों में संकलित है किन्तु बावजूद इसके अभी भी बहुत सा साहित्य अप्रकाशित व अप्रचारित है। विद्वानों का मत है कि विश्वभर के शिष्ट साहित्य ने लोक साहित्य से तत्व व प्रेरणाएँ ग्रहण की हैं। हिन्दी लोक साहित्य के प्रतिष्ठित साहित्यकार श्रीराम शर्मा के इस कथन से

हम पूर्णतः सहमत हैं कि भले ही लोक साहित्य स्वतः स्फूर्त साहित्य होता है फिर भी शिष्ट साहित्य के मानदण्डों के आधार पर भी यह अपने कुछ अंश को साहित्य की उच्च कोटि तक पहुँचाने में सक्षम होता है। गढ़वाली लोक काव्य भी इसका अपवाद नहीं है। इसलिए भी गढ़वाली शिष्ट काव्य की विवेचना से पूर्व उसकी लोक काव्य परम्परा पर एक दृष्टि डालना जरूरी हो जाता है। यहाँ पर लोक काव्य से आशय गढ़वाली लोकजीवन के उस काव्य से है जिसमें लोकाभिव्यक्ति मौखिक अथवा लिखित रूप में अपने वर्ण्य विषय और शिल्प को लेकर पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है। जिसमें रचनाकार तक का पता नहीं और लोकानुभूति ही प्रमुख है। गढ़वाली लोक साहित्य को साहित्यकारों ने निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया है- लोकगाथा, लोकगीत, लोककथा एवं लोकोक्तियाँ। किन्तु गढ़वाली काव्य ने जिनसे कवित्व ग्रहण किया उनमें प्रमुख हैं लोकगाथा एवं लोकगीत। गढ़वाली काव्य के उद्‌भव व विकास को जानने के लिए लोकगाथा एवं लोकगीतों से परिचय होना जरूरी है।

1.3.1 लोकगाथाएँ

हमारे समाज के पौराणिक व ऐतिहासिक चरित्र, वीर योद्धा आदि की महिमा का बखान पराक्रम का यशोगान एवं उनकी प्रेम कथाओं का काव्यमयी वर्णन लोकगाथाओं में पाया जाता है। ये सभी लोकगाथाएँ काव्यसौंदर्य से ओत-प्रोत हैं जिनमें अद्‌भुत काव्य सौष्ठव, सुगढ़ शिल्प और अनोखी भाषा शैली है। जिसके आधार पर साहित्यकार उन्हें उच्च कोटि के काव्य में रखते हैं। साहित्य मर्मज्ञों ने गढ़वाली लोकगाथाओं को चार वर्गों में विभाजित किया है- 1. धार्मिक गाथाएँ, 2. वीरगाथाएँ, 3. प्रणय गाथाएँ, 4. चैती गाथाएँ। अधिकांश धार्मिक गाथाओं का आधार पौराणिक है। इनमें प्रमुख सृष्टि उत्पत्ति, निरंकार, नागरजा, पांडव, नरसिंह आदि की धार्मिक जागर गाथाएँ हैं। ये धार्मिक गाथाएँ अनेकशः जन मानस का मार्गदर्शन करती रही हैं। पांडव वार्ता में द्रौपदी स्वयंवर के समय वरेण्य को शक्ति सम्पन्न होने के साथ-साथ धार्मिक व श्रेष्ठ कर्मों वाला बताया गया है। जिसका काव्य सौंदर्य दर्शनीय हैः-

मिन त जाण बुबाजि वे माळा दगड़ा
जो बाण-भेद माछी को नेत्र बेधलो
जो छाति का बाळौंन किवाड़ ख्वाललो
जो नौ दूण लिम्बा जूंगौं मा थामलो।

अर्थात् राजकुमारी द्रौपदी अपने पिता से कहती है कि हे पिता मैं उस योद्धा का वरण करूंगी जो छाती के बालों से दरवाजा खोल दे, जो घूमती हुई मछली की आँख पर निशाना लगाये, जो नौ मन गलगल (नीबू) अपनी मूँछों में थाम ले।

वीर गाथाओं (पंवाड़े) का आधार ऐतिहासिक है। गढ़ु सुम्याळ, कफ्फू चौहान, जगदेव पंवार, जीतू बगड्वाल, माधो सिंह भण्डारी आदि वीर गाथाओं में वर्णित ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर विद्वानों ने इनका रचनाकाल सन् 800 से 1800 तक माना है। इन गाथाओं में सामन्त युगीन युद्धों तथा संघर्षों का सजीव वर्णन मिलता है। पंवाड़ों में वर्णित युद्ध, नारी सौंदर्य, नायकों की शारीरिक विशेषताओं एवं चमत्कार के वर्णनों में पर्याप्त समानता विद्यमान रहती है एवं शक्ति सम्पन्न वीर योद्धा की शरीराकृति का वर्णन मिलता है। जैसे पीठ में चन्द्रमा, मुख मण्डल सूर्य के समान दीप्त, पर्वत के समान कद-काठी आदि-आदि उपमानों से एक वीर योद्धा (भड़) का वर्णन है।

प्रणय गाथा लोक गाथात्मक प्रेमाख्यानों की परम्परा इतनी महत्वपूर्ण थी कि आधुनिक साहित्य को भी इसकी शरण लेनी पड़ी। गढ़वाली शिष्ट काव्य ने भी लोक प्रचलित प्रणय गाथाओं से काव्य तत्व ग्रहण किए। जीतू बगड्वाल, फ्यूंली रौतेली, राजुला मालुशाही, गजु-मलारी आदि कुछ प्रमुख प्रणय गाथाएँ हैं। यद्यपि गढ़वाली काव्य ने प्रेमाख्यान परम्परा को नहीं ही अपनाया, किन्तु प्रेमाभिव्यक्ति के लिए इन गाथाओं में उल्लिखित उपमाओं, प्रतीकों का बड़ी आत्मीयता से अनेक कवियों ने प्रयोग किया।

1.3.2 लोकगीत

गढ़वाली काव्य के उद्भव एवं विकास में लोकगीतों का योगदान अति महत्वपूर्ण है। बिना इनके हम लौकिक गढ़वाली पद्य साहित्य की कल्पना भी नहीं कर सकते। यद्यपि लोकगीतों के भी कोई न कोई रचनाकार तो रहे ही होंगे। किन्तु यह एक अबूझ पहेली की तरह है कि बूझाये न बने। विद्वानों ने गढ़वाली लोकगीतों को गढ़वाली आधुनिक साहित्य का प्राण माना है। गढ़वाली के महान रचनाकारों- तारादत्त गैरोला, भजन सिंह 'सिंह', अबोधबन्धु बहुगुणा, डॉ० गोविन्द चातक, नरेन्द्र सिंह नेगी आदि ने लोकगीतों को लोकाभिव्यक्ति का सरल व सशक्त माध्यम बताया है। उनकी सर्वग्राह्यता व सम्प्रेषणीयता अत्यन्त प्रभावी बताई है क्योंकि लोकगीतों में मजबूत शिल्प के साथ उत्कृष्ट काव्य सौन्दर्य पाया जाता है। जिसके कारण उनका भाव व कला पक्ष उत्तम कोटि का दिखाई देता है। यही कारण है कि वे हजारों सालों से आज भी उसी तरह गाये जा रहे हैं। उल्लिखित किये जा रहे हैं।

यूं तो लोकगीतों के विभिन्न प्रकार हैं जिनमें मांगल, जागर, थड़िया, चांचड़ी, चौंफला, झुमैलो, बाजूबन्द, छोपती आदि प्रमुख हैं। किन्तु वर्ण्य विषय के आधार पर लोकगीतों को पूजा गीत, ऋतु गीत, प्रणय गीत, विविध गीत इन चार वर्गों में विभाजित किया गया है। पूजा गीत के अन्तर्गत मांगल, जागर आदि आते हैं जिनमें शुभ कार्यों में मंगल कामना हेतु गाये जाने वाले गीत मांगल व देवताओं के आह्वान अथवा जागरण हेतु जागर गाये जाते हैं। विवाह संस्कार के समय

मांगलिक गीतों में कागा, गो, ब्राह्मण, वनस्पति तथा देवों के आह्वान पूजन की आत्मिक भावनाएँ रसिक हृदय को भावातिरेक से भर देती हैं:-

बैठ कागा हरिया बिरिछ, बोल कागा चौदिशु सगुन
पैलि न्यूते पैलि न्यूते बेदमुखि बरमा, बेदमुखी बरमा वेद पाढ़लो
तब न्यूते तब न्यूते औजी को बेटा
औजी को बेटा बढ़ई बजालो।

गढ़वाली लोकगीतों की विविध शैलियों- थड़िया, चौंफला, चांचरी, बाजूबन्द, झुमैलो, छोपती आदि में प्रणय की गहरी अभिव्यंजना होती है। इसलिए इनको प्रणय गीत भी कहा जाता है, यद्यपि इनके विषय जीवन के तमाम पक्ष हैं किन्तु प्रणय इनका मुख्य विषय रहा है। प्रणय गीत मुख्यतः संवादात्मक होते हैं जिनमें प्रेम, संयोग, वियोग शृंगार, मनुहार आदि सभी कुछ देखा जा सकता है। प्रणय गीतों की बाजूबन्द शैली में व्यक्त प्रेम-पिपासा दर्शनीय है:-

हरिया जौ को झीस
ज्यूं ज्यूं पेई ठण्डु पाणि त्यूं त्यूं बाढे तीस।
आगा की अगेठी
तेरि मायान ये सुवा जिकुड़ि लपेटी।

चैती गीतों में बारहमासा का मुख्यतः ऋतु वर्णन पाया जाता है। विविध ऋतुओं के आगमन पर प्राकृतिक सुषमा का वर्णन, अपने प्रियजन से मिलने की आस, उत्कण्ठा, व्याकुल छटपटाहट आदि भावनाएँ व्यक्त की जाती हैं। ऐसे ही एक कारुणिक गीत में एक युवती उलाहना देती कहती है- बारह महीने बीत गये हैं। मेरी दयनीय दशा हो गयी है किन्तु मेरा प्रियतम लौटकर नहीं आया:-

बारा मैनौ की बारामासी गाई
घघरी चिरेकी घुंड्यूं मा आई
ऋतु बौड़ी ऐगी स्वामी चैत मास
मी थैं इखरि स्वामी तुमारि आस।

जबकि विविध गीतों की भी एक लम्बी शृंखला है। जैसे नाम से ही इंगित होता है। इस श्रेणी के गीतों के वर्ण्य विषय विविध हैं। हमारे लोक में इन समृद्ध गीतों में हास्य मनोविनोद भी अनूठा पाया जाता है। जो हमारे दैनिक जीवन से उपजता है। हमारे ग्रामीण अंचल में मुख्य व्यवसाय कृषि और उसका आधार हल व बैल हैं। ऐसा ही एक बैल 'मोती ढांगु' का वर्णन बड़ा हास्य पैदा करता है:-

तिलै धारू बोल बै सबासे मेरा मोती ढांगा

घोटी जाली हींग
नौ रुप्या को मोती ढांगु सौ रुप्या को सींग
बखरौं की तांद
हळस्यूं को नौं सूणी की लमसट्ट ह्वे जांद।

1.4 गढ़वाली काव्य का उद्भव व विकास

जैसा कि पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि गढ़वाली काव्य अति प्राचीन है। लोक काव्य का सन् 800 ई० से प्रारम्भ माना गया है जिसका क्रम निरन्तर 1800 ईसवी तक चलता रहा। जब लौकिक गढ़वाली काव्य का प्रसंग आता है तो 'मोछंग' की भूमिका में चक्रधर बहुगुणा व 'शैलवाणी' की भूमिका में अबोधबन्धु बहुगुणा ने यह माना है कि राजा प्रदीप शाह के राज ज्योतिषी कवि पं० जयदेव बहुगुणा ने सन् 1750 ई० में 'पक्षी संहार' काव्य का सृजन किया। उसका एक अंश दृष्टव्य है:-

रंच जुड्यां पंच जुड्या, जूड़िगे धिमसाण जी
टोट्या ब्वाद गरुड़ राजा ब्यो मा मिन बि जाण जी
ढेंचु जि त ढोल्या पैट्यां सेंटुलु दमय्यां जी
घुघती मंगळेर पैटी कागा छन डोलेर जी
गाड़ बासे गडमळि अर धार बांसे सिक्रा जी
तब्त उळु काणु बोद मेरि डांडि लिख्या जी।

याने पंछियों की पंचायत में भारी भीड़ जुटी हुई है। आज गरुड़ राजा का विवाह है। सभी पक्षी बारात की तैयारी कर रहे हैं। बगुला कह रहा है मैं भी बारात में जाऊंगा। ढेंचु ढोल वादक है, सेंटुलु याने पहाड़ी मैना दमौ वादक है। घुघती मांगळ लगाने वाली है तो कौवे कहार हैं। घाटियों में गडमळि तथा धार में सिक्रा कलरव कर रहे हैं। उल्लू कहता है मुझे भी डांडी में ले चलो। 'पक्षी संहार' कविता को कुछ साहित्यकार, विद्वान प्रामाणिक नहीं मानते। पं० जयदेव बहुगुणा के अतिरिक्त इस काल में स्वामी शशिधर (1750-1825), सुदर्शन शाह (1825), गुमानी पंत (1780-1846), मौलाराम, चन्द्रकुंवर बर्त्वाल आदि की भी कुछ गढ़वाली रचनाएँ पाई जाती हैं।

1.4.1 गढ़वाली कविता की प्रारम्भिक त्रिमूर्ति

विद्वानों के अनुसार महन्त हर्षपुरी गुसांई (1820-1905), लीलानन्द कोटनाला (1846-1926) एवं हरिकृष्ण दौर्गादत्ति (1855-1910) ये कालखण्ड अर्थात् (1850-1900) की त्रिमूर्ति माने जाते हैं, जिन्होंने गढ़वाली में आरम्भिक सृजन किया। इन तीनों कवियों ने तत्कालीन

देशकाल वातावरण के अनुसार लेखन किया। महन्त हर्षपुरी गुसाई की 'राजनीति' व 'बुरोसंग' रचनाएँ 1850 के लगभग की मानी जाती हैं जिसकी कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं:-

अकुलों मा माया करी वैकी बि नि पार तरी
बार बिथा सिर धरी बेकुबी को रोयेंद,
जख तख मिसे जांद झूठा-फीटा सौं खांद
दियूं लेयूं तन जांद, अपजस पायेंद।

पं० लीलानंद की 'लाट रिपन' कविता सन् 1880-1884 के बीच की मानी जाती है जब लार्ड रिपन वायसराय थे। इस कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:-

भारत का टोल साब भारत का टोल
हे लाट रिपन साब तेरो रैगै बोल
जनि जनि बांधि तुमन भलि भलि जथा
तनि तुमरि गाये जांद जख तख कथा।

इसके अतिरिक्त उनकी 'गढ़वाली छन्दमाला', 'गढ़गीता', 'लीला प्रेमसागर' भी प्रकाशित हैं। इस त्रिमूर्ति के अतिरिक्त जयकृष्ण दौर्गादत्ति ने भी इस कालखण्ड में साहित्य सृजन किया। प्रमाणों के आधार पर सिद्ध हो जाता है कि वे सभी कवि भारतेन्दु युग (1868-1900) के समकालीन थे। इसी युग में इस त्रिमूर्ति ने गढ़वाली कविता का आगाज किया। इस युग की हरिकृष्ण दौर्गादत्ति रुडोला की 'श्री गंगा पंचक' की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं:-

तुमारि धारा की अचल महिमा जो जगत मा
बणी छ श्री गंगे! प्रकटित छ वा शैव मत मा
सदा शिवजी जैका, नित रहित तैं, आप बस मा
नि छोड़दा जैकु तैं मगन मन सी भक्ति रस मा।

1.5 गढ़वाली काव्य के उत्थान का वर्गीकरण

गढ़वाली कविता के विकास क्रम को सरलता से समझने के लिए उसके विभिन्न कालखण्डों अथवा चरणों का 'उत्थान' के अन्तर्गत अध्ययन सुविधाजनक होगा। सन् 1900 से यदि पच्चीस वर्ष का एक उत्थान निर्धारित किया जाए तो ये उत्थान इस प्रकार होंगे:-

1. प्रथम उत्थान (सन् 1900 से 1925 तक)
2. द्वितीय उत्थान (सन् 1926 से 1950 तक)
3. तृतीय उत्थान (सन् 1951 से 1975 तक)

4. चतुर्थ उत्थान (सन् 1976 से 2000 तक)

5. पंचम उत्थान (सन् 2001 से 2025 तक)

1.5.1 प्रथम उत्थान (सन् 1900 से 1925 ई०)

सन् 1905 में 'गढ़वाली' पत्र का जन्म हुआ। कुछ साहित्य प्रेमी जो विशेष रूप से हिन्दी साहित्य से अनुराग रखते थे उनका ध्यान गढ़वाली की तरफ गया। शिक्षित गढ़वाली समाज का ध्यान भी गढ़वाली कविता की ओर आकर्षित हुआ। तभी गढ़वाली कविता ने नवजीवन पाया। गढ़वाली कविता को नवजीवन देने वाले कवियों में आत्माराम गैरोला, सत्यशरण रतूड़ी, भवानीदत्त थपलियाल, तारादत्त गैरोला एवं चन्द्रमोहन रतूड़ी आदि प्रमुख थे। इससे पूर्व तारादत्त गैरोला 'The songs of Dadu' एवं 'Himalayan Folklore' लिखकर अंग्रेजी साहित्य में ख्याति अर्जित कर चुके थे। जबकि हिन्दी, अंग्रेजी व संस्कृत के धुरंधर विद्वान पं० चन्द्रमोहन रतूड़ी साहित्य सृजन के लिए कोई भी भाषा अपना सकते थे किन्तु उन्होंने इन तीनों को छोड़कर अपनी मातृभाषा को ही अपनाया, उसी में लिखा। इस उत्थान में आत्माराम गैरोला कृत- 'पंछी पंचक', 'अबला की पुकार', 'बेटुलो', 'सूर्योदय'; सत्यशरण रतूड़ी-'उठा गढ़वालियो', 'गढ़वाल की सेना को युद्ध का वास्ता प्रस्थान'; चन्द्रमोहन रतूड़ी- 'देवबण को वर्णन', 'विरह बसन्त विलाप', 'टीरि से विदा' प्रथम उत्थान में ही बलदेव प्रसाद शर्मा 'दीन' की गेय रचना 'बाटा गोडाई' (1918), तारादत्त गैरोला की 'सदेईः जाग्रत स्वप्न' 1921 तथा शिवनारायण सिंह बिष्ट कृत 'गढु-सुम्याळ' उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त शशि शेखरानन्द सकलानी, देवेन्द्र दत्त रतूड़ी, गिरिजा दत्त नैथानी, सुरदत्त सकलानी, अम्बिका दत्त शर्मा, मनमौजी, रत्नाम्बर चन्दोला एवं सदानन्द कुकरेती आदि भी महत्वपूर्ण हैं।

इस युग की रचनाओं में राष्ट्रप्रेम, देशहित, धार्मिक भावना, नारी दुर्दशा, स्तुति, चेतावनी आदि विषय प्रमुखतः दृष्टव्य हैं। भाषा में संस्कृतनिष्ठ गढ़वाली का पुट पाया जाता है। छन्दबद्ध रचनाएँ हैं। कलापक्ष की अपेक्षा भावपक्ष अधिक प्रबल दिखाई देता है। अधिकांश लेखक उच्च शिक्षा प्राप्त भाषाओं के ज्ञाता थे। यह विद्वता व शास्त्रीयता उनकी रचनाओं में स्पष्ट झलकती है।

1.5.2 द्वितीय उत्थान (सन् 1926 से 1950 ई०)

इस युग में गढ़वाली कविता ने अपनी धारा को तीव्र करके बदलने का भी साहस दिखाया। इस युग के कवि इक्का-दुक्का कविताओं तक सीमित नहीं रहे बल्कि उन्होंने कविता संग्रहों का सृजन व प्रकाशन कर डाला। इनकी रचना गढ़वाल व देश के विविध विषयों पर दिखाई देने लगी। इस उत्थान की रचनाओं में तोताकृष्ण गैरोला की 'प्रेमी पथिक', योगेन्द्र पुरी की 'फुलकण्डी', चक्रधर बहुगुणा की 'मोछंग', केशवानन्द कैन्थोला की 'मन तरंग', भजन सिंह 'सिंह' की

'सिंहनाद', तारादत्त लखेड़ा की 'बिरहणी बाला', भोलादत्त देवरानी की 'जुओ अर जनानी', सदानन्द जखमोला की 'रैबार' एवं भगवती चरण निर्मोही की 'हिलाँस' उल्लेखनीय हैं। इस द्वितीय उत्थान में रचनाकारों ने अपनी कविताओं में समाज व राष्ट्र के लिए उपयोगी विचारधारा पर अधिक बल दिया। इसके लिए उन्होंने कुछ सरल व मधुर आख्यानों को भी चुना तो वहीं कुछ नई कल्पनाशीलता का परिचय भी दिया। शिल्प की दृष्टि से भी उन्होंने कुछ सरल प्रयोगों की आवश्यकता महसूस की। साथ ही उन्होंने संस्कृत छन्दों का प्रयोग व व्याकरण के नियमों का भी पालन किया। कुछ कवियों ने लोक में प्रचलित छन्दों का अपनी कविताओं में सफल प्रयोग किया। इस उत्थान में गढ़वाली काव्य में मौलिक अभिव्यक्ति अंकुरित हुई एवं रस को प्रधानता देने वाली प्रतिभाएँ भी प्रकाश में आई।

1.5.3 तृतीय उत्थान (सन् 1951 से 1975 ई०)

आजादी के पश्चात् देश के तमाम वर्ग अपनी-अपनी सामर्थ्य अनुसार देश के नव निर्माण में लग गये। गढ़वाली भी इस अभियान में पीछे नहीं रहे। देश विभाजन के पश्चात् पर्वत निवासियों में न तो कोई साम्प्रदायिक संकट था न ही शरणार्थियों की सी कोई समस्या। किन्तु सांस्कृतिक मूल्यों व पेशों में एकदम तेजी से बदलाव के कारण रोजगार की समस्या ही मुख्य रही। इसके कारण गढ़वालियों में दो वर्ग बन गये। एक तो वे जो अपनी पुश्तैनी जमीन में जी तोड़ मेहनत करने लगे और दूसरे वे जो रोजी-रोटी की खातिर पलायन कर गये। इस देश काल परिस्थिति के अनुसार ही जीवन की इस विषम परिस्थिति, दुख-दर्द को गढ़वाली कविता ने अभिव्यक्त किया। अब वह सामाजिक विकृतियों के साथ ही मनुष्य को विकासोन्मुख होने की प्रेरणा भी देने लगी। इस तरह से पिछले उत्थानों की तुलना में स्वतन्त्रता के बाद गढ़वाली कविता की ओर लोग अधिक आकर्षित हुए। जिसका परिणाम यह हुआ कि कविता की जरूरत महसूस होने लगी। इस उत्थान की रचनाओं में शृंगार, प्रेम, व्यंग्य, करुणा, व राष्ट्रीय भावना को व्यापक फलक मिला और अपने सरल प्रवाह के कारण वह अधिक लोकप्रिय हुई। उसमें प्रकृति के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं को अभिव्यक्ति देने वाले उच्च काव्यादर्शों की स्थापना हुई। इसी युग में जगह-जगह कवि-सम्मेलन आयोजित होने लगे और जहाँ कवियों को यश प्राप्त होने लगा, वहीं भाषा साहित्य की किरण यत्र-तत्र पहुँचने लगी। इस दृष्टि से भी यह उत्थान सर्वथा विशिष्ट व ऐतिहासिक माना जाता है। साहित्य के प्रति प्रथम आकर्षण इस उत्थान की स्मरणीय देन है। तृतीय उत्थान के प्रमुख रचनाकार एवं उनकी कुछ उल्लेखनीय कृतियों का उल्लेख करना भी लाजमी है जो इस प्रकार से हैं-श्रीधर जमलोकी की 'रौंदेडु', गिरधारी प्रसाद थपलियाल कंकाल की 'नवाण', 'मौल्यार', 'सूना बैण', 'फुर्र घिंडुड़ि'; अबोधबन्धु बहुगुणा की 'रण मण्डाण', 'तिड़का', 'धुंयाळ', 'पार्वती', 'घोल'; कन्हैयालाल डंडरियाल (मंगतू सहित अनेक कृतियाँ पर वो इस उत्थान में प्रकाशित न हो सकीं); डॉ० उमाशंकर सतीश की 'खुदेड़'; जीत सिंह नेगी की 'गीत गंगा', 'जौंळ मंगरी'; जीवानन्द

श्रीयाल की 'गढ़ साहित्य सोपान'; राम प्रसाद गैरोला की 'सुद्याल', पूरण पन्त पथिक की 'मेरो बोड़ा', 'पथिक के गीत'; सचिदानन्द काण्डवाल की 'रैबार'; मुरली मनोहर सती की 'गढ़वाल झांकी' आदि।

1.5.4 चतुर्थ उत्थान (सन् 1976 से 2000 ई०)

इस अवधि में जब देशभर में राष्ट्रीय, सांस्कृतिक पुनर्जागरण होने लगा तो इसी के साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं मानवीय मूल्यों की तरफदारी की ओर गढ़वाली रचनाकारों का रुझान भी हुआ। गढ़वाली कवि अनुभूति व चिन्तन के महत्व को समझने लगे। चौथा उत्थान प्रारम्भ होते ही गढ़वाली कवियों में यथार्थवादी दृष्टिकोण, भावना से अधिक विचार प्रधानता व राष्ट्रीयता की भावना अधिक प्रबल दिखने लगी। मानवीय संवेदनाओं की अनुभूति व अभिव्यक्ति प्रमुखता से दृष्टिगोचर होने लगी। इस उत्थान की रचनाओं में काव्य को मजबूत शिल्प मिला। कविता छन्दमुक्तता की ओर बढ़ी। हिन्दी साहित्य में जिस प्रकार छायावादोत्तर कविता ने प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के रास्ते आधुनिक युग में प्रवेश किया। ठीक उसी भाँति गढ़वाली कविता में भी ऐसे ही बदलाव स्पष्ट देखे जाते हैं। अब उसके तेवर काफी तीखे व भाषा शैली में भी अभूतपूर्व बदलाव देखने को मिलता है। तकनीकी व शिल्प की दृष्टि से यह उत्थान गढ़वाली कविता का स्वर्णयुग कहलाता है, ऐसा विद्वानों का मानना है। गढ़वाली कविता के इस स्वर्णकाल में काव्य का लक्ष्य सामाजिक पुनर्निर्माण करने वाली विचारधारा को स्थापित करना भी था। कवियों ने भाव व अभिव्यक्ति को नये आयाम दिये। नया शिल्प दिया जिससे कविता का वैचारिक धरातल बहुत सुदृढ़ हुआ। इस उत्थान के प्रणेता भी गिरधारी प्रसाद कंकाल, अबोधबन्धु बहुगुणा, कन्हैयालाल डंडरियाल, प्रेमलाल भट्ट, सुदामा प्रसाद प्रेमी आदि वरिष्ठ कवि रहे। इसी उत्थान के अन्तर्गत गढ़वाली के महाकाव्य 'भूम्याल' (अबोधबन्धु बहुगुणा), 'नागरजा' (कन्हैयालाल डंडरियाल), 'उत्तरायण' (प्रेमलाल भट्ट) रचे गये। इसके साथ ही अनेकों खण्डकाव्य, प्रबन्ध काव्य, गीति काव्य सहित सैकड़ों मुक्तक काव्य भी प्रकाश में आये।

उपरोक्त महाकवियों की अगली पीढ़ी में भी बहुत सशक्त कवि हुए जिनमें प्रमुख हैं ललित केशवान, पारेश्वर गौड़, लोकेश नवानी, घनश्याम रतूड़ी 'सैलानी', नरेन्द्र सिंह नेगी, रघुवीर सिंह रावत, वीणा पाणि जोशी, जग्गू नौडियाल, शिव प्रसाद पोखरियाल, चन्द्र सिंह राही, महेश तिवाड़ी, महेशानन्द गौड़, नेत्र सिंह असवाल, विनोद उनियाल, डी०डी० सुन्दरियाल आदि। जबकि इसी सदी के अन्तिम दस-पंद्रह वर्षों में, अगली पंक्ति में भी बहुत प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार सामने आये जिनमें चिन्मय सायर, देवेन्द्र प्रसाद जोशी, मदन मोहन डुकलाण, सुरेन्द्र पाल, नीता कुकरेती, महावीर बडोला, जयपाल सिंह रावत, वीरेन्द्र पंवार, सत्यानन्द बडोनी, निरंजन सुयाल, महेन्द्र ध्यानी, ओम प्रकाश सेमवाल, शिव दयाल शैलज, कुंज बिहारी मुंडेपी, डॉ० कुटज भारती, बीना

बेंजवाल, बीना कण्डारी, गणेश खुगशाल 'गणी', गिरीश सुन्दरियाल, धर्मेन्द्र नेगी, हरीश जुयाल 'कुटज', ओम बधाणी, मधुसूदन थपलियाल आदि प्रमुख हैं। उल्लेखनीय यह भी है कि इस उत्थान के ये तीसरी पीढ़ी के रचनाकार आज इस इक्कीसवीं सदी में भी बहुत सक्रियता व शिद्दत से साहित्य सृजन कर रहे हैं। अर्थात् इन्हें दो सदियों के अन्तर्गत कवियों की तीन-चार पीढ़ियों के साथ साहित्य व विचार साझा करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ है।

1.5.5 पंचम उत्थान (सन् 2000 से 2025 ई०)

चतुर्थ उत्थान के दूसरी व तीसरी पीढ़ी के कवि इस पंचम उत्थान के भी सक्रिय व चर्चित कवि हैं। इसके अतिरिक्त बहुत से नये कवि भी इस उत्थान से जुड़े हुए हैं। सोशल मीडिया के प्रभाव व सुविधा के कारण आज अन्य उत्थानों की अपेक्षा अत्यधिक साहित्यकार गढ़वाली साहित्य में सक्रिय हैं। आज की कविता की विषय वस्तु बहुत व्यापक हो चुकी है। अपने घर गाँव से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दों पर भी गढ़वाली कविता की नजर जा चुकी है। आज की गढ़वाली कविता में विविध प्रयोग, नवोन्मेषी विचार देखने को मिलते हैं। परम्परा, प्रकृति व सम्पूर्ण जनजीवन में आये बदलाव के कारण कविता में भी बदलाव आना लाजमी है। आज की कविता में डांडि-काँठ्यूं की खुद, पलायन की पीड़ा आदि पुराने विषय नीरस से लगते हैं। यद्यपि आज भी बहुतेरे कवि अपनी रचनाओं के वर्ण्य विषय दोहरा रहे हैं। काव्य की लगभग सभी विधाओं छन्दबद्ध, छन्दमुक्त, क्षणिकायें, मुक्तक, प्रबन्ध काव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, हायकू, गजल में उल्लेखनीय रचनाकर्म जारी है। आज भी गद्य की अपेक्षा पद्य में ही अधिक लिखा जा रहा है और वह भी मुक्तक काव्य। वास्तव में खण्डकाव्य व महाकाव्य लिखने के लिए तो निसंदेह संयम, सामर्थ्य व विलक्षण प्रतिभा की आवश्यकता होती है। किन्तु उपभोक्तावाद व समयाभाव के कारण शायद ही कोई कवि अपनी प्रतिभा के साथ न्याय कर पा रहा हो।

इस उत्थान के प्रमुख कवियों में मुरली दीवान, दिनेश ध्यानी, जगदम्बा चमोला, सुधीर बर्त्वाल, देवेन्द्र उनियाल, संदीप रावत, गीतेश नेगी, जगमोहन बिष्ट, राकेश मोहन खन्तवाल, आशीष सुन्दरियाल, अनूप रावत, वीरेन्द्र जुयाल, अनिल नेगी आदि प्रमुख हैं।

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. गढ़वाली साहित्य का आदि काव्य किसे कहा जाता है?
2. पंवाड़ों का रचनाकाल कब से कब तक माना जाता है?
3. 'पक्षी संहार' के रचयिता कौन हैं?
4. तृतीय उत्थान कब से कब तक माना जाता है?
5. किसी एक महाकाव्य का नाम लिखिए।

1.7 संदर्भ ग्रन्थ

1. गढ़वाली भाषा और उसका साहित्य- डॉ० हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'
2. शैलवाणी- अबोधबंधु बहुगुणा
3. गढ़वाली कविता का उद्भव विकास एवं वैशिष्ट्य- डॉ० जगदम्बा प्रसाद कोटनाला
4. अंग्वाळः सम्पादक- मदन मोहन डुकलाण एवं गिरीश सुन्दरियाल

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गढ़वाली काव्य के उद्भव व विकास के लिए लोकगीत व लोकगाथाओं का क्या महत्व है?
2. गढ़वाली काव्य के चतुर्थ उत्थान का पंचम उत्थान के साथ क्या सम्बन्ध है?

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. लोकगीत एवं लोकगाथा, 2. सन 800 से 1800, 3. पं० जयदेव बहुगुणा, 4. सन् 1951 से 1975, 5. नागरजा।

इकाई-2

पं० तारादत्त गैरोला सदेई (गीत)

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 कवि परिचय

2.4 सदेई (गीत)

2.5 सारांश

2.6 शब्दार्थ

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.8 संदर्भ ग्रन्थ

2.9 निबंधात्मक प्रश्न

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :-

- साहित्य की गीति काव्य विधा से परिचित होंगे।
- पहाड़ की नारी की पीड़ा को महसूस करेंगे।
- भाई-बहन के आपसी प्रेम की गहराइयों को समझ पायेंगे।
- एक विवाहित बेटी के अपने मायके से लगाव को समझ पायेंगे।
- मनुष्य के प्रकृति से लगाव को समझ पायेंगे।

2.3 कवि परिचय

साहित्यकार पं० तारादत्त गैरोला जी का जन्म 06 जून, 1875 को टिहरी गढ़वाल जनपद के पट्टी बडियार गढ़ के ग्राम दालढुंग में हुआ। इन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम० ए० (अंग्रेजी) व वकील हाइकोर्ट की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। 1901 ई० में इन्होंने देहरादून में वकालत आरम्भ की। वे उसी वर्ष गढ़वाल यूनियन नामक संस्था के मंत्री चुने गये। 1905 में यूनियन की ओर से 'गढ़वाली' पत्रिका (मासिक) का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। गैरोला जी उसके सम्पादक मण्डल में थे। 1906 में आप पौड़ी आ गये तथा वहीं वकालत करने लगे। प्रकाशित कविताएँ- 1. सदेई, 2. मेरी लाडली, 3. फ्यूंली रौतेली, 4. आरती, 5. जीतू, 6. झुमैलो, हिमालयन फोक लोर- उत्तराखण्डी भड्वार्तियों का अंग्रेजी अनुवाद। 28 मई 1940 को आपका देहान्त हुआ।

2.4 जीवनी के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. साहित्यकार पं० तारादत्त गैरोला का जन्म कब हुआ?
2. पं० तारादत्त गैरोला ने एम० ए० कहाँ से किया?
3. सदेई गीति काव्य कृति किसने लिखी है?
4. पं० तारादत्त गैरोला का देहान्त कब हुआ?

2.5 सदेई जाग्रत स्वप्न

सदेई की छै जनि मैत डाळी,
बिसरौण कू तैं खुद तैंन
सिलंग डाळी ससुराड़ि लाई,
चमोला की सुन्दर चौंरि
दुपत्ति होई, चउपत्ति होई,
हाथू कि बेतू कि त डाळि
औरू कि वर्षू बढ़देन जन्नी,
सैदी कि डाळी बढ़दे दिनू
गईन फाटी अब चार सांई,
चारौं दिशौं मा त गयेन फांगे
फांगे व पत्ते भि त खूब घऽणी,
आयेन सांयो पर डाळि वीं
गुटमुट बड़ी छत्रि सि गोळ डाळी,
छाया घणी स्या भलि देण लै
चौंरी घस्यार्यों कि बिसौण होली,
तैं डाळि मां होलो चड़ों को बास
क्या खूब स्वाणी कनि डाळि प्यारी,
तैं चौंरि मांजे कनि देंद शोभा।
दोफरी का घामऽत थक्यां बटोई,
निस डाळि बैठी देला आसीस ।।5।।

(2)

जड़ो नसीगे प्रकृती बिजीगे,
पशू व पंछी सभि जो गयेन।
जाड़ा न जो सुन्न त होई गैतो,

स्यो बौड़िगे ल्वे-रस-सार प्राण ।।1।।
डाळी व बोटी बण वो बणोंडी,
निर्लज्ज जाड़ा न करेति नांगी।
अनेक पैर्याळ न ऊं रंग की,
बसंत का स्वागत कू त साड़ी ।।2।।
गाड गधेरा अर पंछि पौन,
छया जो जाड़ा न सुन्न होयां।
कर्ण से कोलाहल लगि गैन,
खुशी बसन्त कि मनौण लैन ।।3।।
चीरो कळ जा पहुचौण्या वायू,
स्या धैं त स्वाणी अब लागदे छ।
सुगन्ध फूलू दगड़े मिली क,
अमृत पिलाई पुलकौंद पौन ।।4।।
सफेद रत्ता पिंगळा व नीला,
भांती व भांती छन फूल फूल्यां।
सभी न यूँ न प्रकृती पुरूष की,
सजाइ दीने रति-रंग-भूमी ।।5।।
कुलूड़ी भि फूली अर फ्यूँलि फूली,
गयेन फूली बण वेा बणोंडी।
गुलाब फूल्यो अर कूँजो फूल्यो,
फूली गयेन लगुले व साड़ी ।।6।।
आरू घिंघारू अर आम डाळ,
निम्बू नरंगी भि त फूलि गैन।
चम्पा भि जाई भि चमेलि फूली,
बुरांस धारू मंज ऊंचि फूल्यो ।।7।।
सिलंग फूली सब तौर फूली,
गईन फूटी कलि कोंपले भी।
क्या घऽर क्या बऽण सभी जगौं मां,
थ्सलंग की बास सुबास फैली ।।8।।
छन रंग नाना, अर रूप नाना,
सुबास नाना, अर गीत नाना।
अनेक नाना विधि का त स्ये तऽ,

दिखेंद, सूँघेंद, सुणेंद, जां ता ।।9।।
गीतू सुरीला छन पंछ गाणा,
वीं कोकिला की पर प्यारि कू कू।
सुगेद चारू दिशि दूरू दूरू,
दुखौंद ज्यू कू सहदेइ का छ ।।10।।
पंछी त गाला छइ मास और, चेड़ो ककू बासलो चैत मास।
सिलंग डाळी पर फ्यूँलि गाली,
ना बास के कू ज्युकड़ी झुरौंदी ।।11।।
हळया रयों मां छन मस्त रौंक्णा,
पाख्यों घस्यारे छन गीत गाणी।
लगाई भौणे छन गीतु मांजे,
स्वालू जबाबू दुहरौण लागीं ।।12।।
रै वार रै पर हिलांस प्यारी,
कू कू करी कूकद लंबि कू कू।
झपन्याळि गैरी छ गदेऽरियों मां,
स्या म्योलड़ी भी कना गीत गाणी ।।13।।
भौरा छया जो सुनसान व्याळ,
स्ये आज फूलू फुलु मांत गुंज्णा।
ये फूल की केशर फूल वै मां,
लिजाण लाग्यां छन सवार्थि भौंरा ।।14।।
इनी निराली अर भांति भांत्यूँ,
छ काम होणू प्रकृती-पुरुष को।
सृष्टी छ सारी उत्सौ मनौणी,
खुशी मनौणी खिल खील हंसणी ।।15।।
बसन्त ये मां रज-तात-बात,
आयूँ छ गर्भाशय बीजु माँजे।
जण्नऽकु जन्नू जननी जनक को,
छ जज्ञ जोड़यूँ जग मांज जां तां ।।16।।
सिलंग नीस ऽ सहदेइ बैठीं,
सुण्णी छ देख्णी छ बण की बहार।
तै मैति डाळी मुँ सदानि औंदे,
खुदेड़ सैदी खुद बीसरौण ।।17।।

सैदी कु औंदे जब याद मैते,
दगड़ू याणियों की भि छ याद औंद।
बणूँ बणोंडो कि भि याद औंद,
धारू व गाडू कि भि याद औंद ।।18।।
चौंरी मां बैठीं च खुदेड़ सैदी,
बौळी सि होई खुद ते सदेई।
चिड़ी सि रीटी भरि ज्यू स्या रौंदे,
इना इना बैन मुबैन बौदे ।।19।।
"हे ऊँचि डांड्यों तुम नीसि जावा,
घणी कुळायों तुम छांटि होवा।
मैं कू लगीं छ खुद मैतुड़ा की,
बबा जि को देखण देश देवा ।।20।।
भ्मैत ऽ कि मेरी तु त पौन प्यारि,
सुणौ तु रैबार त मां को मेरी।
गाडू गन्यू वि हिलांस कप्फू,
मैत ऽ को मेरा तुम गीत गावा ।।21।।
बार ऽ ऋतू बौड़लि बार मास,
आली व जाली जनु दांइ फेरो।
आई नि आई निरभाग मैं कू,
क्वी भी नि आई ऋतु मेरि दां त ।।22।।
बसंत मैना सब का त भाई,
भेंटेण आला बहिण्यों कु अप्णी।
छीदी भुली मीलिक गीत गाली,
गळा लगाली खुद बीसराली ।।23।।
मैत्यों कि भेजीं कपड़ों की छाल,
पैर्ली दिखाली कनु से मिजाज।
लठ्याळि मेरो कुइ भाइ होंदो,
कलेऊ लौंदो व दुरौंदो पैणा ।।24।।
लठ्याळि होलो निरभाग मेरो,
पोठि नि क्वी होयन भाई बैणा।
करी पछिण्डी छऊं धौळी पार,
गाऊँ विदेशी अर दूर देश ।।25।।

जवान ह्वैग्यूँ लड़क्वाळि भी ग्यूँ,
मेरी करे के न खबर न सार।
मैत ऽ कि देवी छइ झालीमाली,
मेरी सुणीयाल बिपत्ति भारी ।।26।।
दीयाल मैं कू इक भाइ प्यारो,
देखी क जै कू खुद बीसरौं मैं।
भाई कि मुखड़ी जब देखि लेंदो,
होंदो सुफल जीवन यो त मेरो ।।27।।
मैं कू त नी छ कुछ और इच्छा,
समान भाई नि छ और क्वी भी।
देली दु जो यो बर आज मैं कू,
मैं देंउलो त्वै सरवस्व देवी ।।28।।
जो भाइ होलो अठवाड़ द्यूँलो,
पंडौं नचौंलो अर जात द्यूँलो।
खोंदू अभी नीतर प्राण अप्णो,
सहाय ह्वैजा दुरगा भवानी'' ।।29।।
देवी भवानी, जननी जगत की,
प्रसन्न होंदे बर तैं कु देदे।
"होलो सदेऊ इक भाइ तेरो,
बड़ो प्रतापी मिललो वो त्वै कू" ।।30।।
अकाशवाणी इनि वीं न सूणे,
"सुप्नो छ यो या भरमौणु क्वी मैं?
या मेरी होली कुल इष्ट देवी",
छन्दोल नाना बिधि कदिं मन्ना ।।31।।
गई सदेह जब सांझ होये,
सिलंग डाळी सणि भेंटि डेरा।
धर्दी छ वा धीरज, शान्त होंदी,
लग्दी छ धन्दौं पर स्या त घर्का ।।32।।

(3)

जन्मी गये मैत सदी को भाई,
होई खुशी गे अति मैत वीं का।
माता सदी की उत्छो मनौंदे,

पंड़ौ नचौंदे अठवाड़ कर्दे ।।1।।
लगौंदन ऽमांगळ गौं कि नौंने,
वो वेद वर्मा कुँडली लगौंद।
“होलो प्रतापी यो पुत्र तेरो”
सदेउ वैको छ वो नाम धर्द ।।2।।
वर्ष जना औरु का नौना बढ़ला,
सदेउ बढ़लो दिनु मासु मांझ।
बार ऽ बरष को जब सैदु होयो,
शेरू व मिर्गू सणि मारि लौंद ।।3।।
वो खेल नाना विधि का छ कर्द,
पंडौं का नाचऽ व अंग्वाले कर्द।
लौंदो छ जीता सिउ बाघु बाँधी,
होलो बड़ो वीर त बाळो सैदू ।।4।।
औंदन आरू कि त बैणे मैत,
भेंटेलि बैणे दीदा मुलौं से।
क्लेउ लाली अर बांटली भी,
सैदू का नी न कुइ भाइ बैणा ।।5।।
देखी क तौंकू त उदास होंद,
सदेउ वीर ऽ इना बैन बोद।
‘‘बैणी जो होंदी त कलेउ लौंदी,
मैतूड़ा औन्दी जनि और ऐने ।।6।।
भाग्यान होला छन जौं कि बैणी,
निर्भाग छौं मैं नि छ जै कि बैण।
किलाई माता नि छ बैण मेरी?’’
सुणी क माता जिउ रोकि बोदे ।।7।।
“मेरा सदेऊ तु भकाई के न?
क्या कर्दि बैणी कि त बात पूछी?
होंदी जो बैणऽत स्या मैत औंदी,
नादान छै तू त बुबा सदेऊ” ।।8।।
स्वप्नो इनो रात सदेउ होंद,
सिलंग डाळी एक द्यौळि पार।
सुगन्ध स्वाणी घणि गुटमुटी सी,

बैठीं छ डाळी निस एक नौनी। ।।9।।
सदेउ का गांव जथैं च देख्णी,
अती खुदेणी छ, छ और रोणी।
नौना त बैठ्यां दुइ पास तैं का,
अंद्वार तौं की भि छ सैदु की सी ।।10।।
सैदू बिजीगे अर देख्ण लैगे,
इथैं उथैं खोजण बैण अप्णी।
“स्या बैण मेरी त अवश्य होली,
बिजी किलाई, हत!नींद मेरी? ।।11।।
कनाइ जौंलो गउं बैणी का मैं
मैं मैत बैणी कु कनाइ लौंलो”
रोंदो बरांदो गये पास मां का,
बौळो सि ह्वै क इन बैन बोद ।।12।।
“बैणी को गाऊं बतलौ तु माता,
जाई क बैणी कु त मैत लौलो।
देखी छ मै न ऽ सुपिना मां रातऽ,
रोणी बराणी अर कोसणी छ ।।13।।
माता दिदी मेरि अवश्य स्या छ,
बतौ तु कर्लो नित अन्न सन्न।
फॉसी लगौलो विष खाइ मर्लो,
बैणी को मैं खोज अवश्य जौंलो” ।।14।।
सदेइ की याद त मां कु औंदे,
उम्ड़ी गये मोह ममत्व वीं को।
“छै कोखि पैली जनमी सदेई,
बड़ी खऽरी खाइ क लाड़ि पाळी ।।15।।
कठिण् छ बाटो वख दूर देश,
डांडा व कांठा त अकाश पौंछ्यां।
भंगार डांडा छन भारि भारी,
बटो न पैंडा नि छ बस्ति क्वी भी ।।16।।
छाला गधेरा पहुँच्या पताळ,
गैरी छ गंगा अर गाड गद्गा।
कठैतु का गाउं चुला कठूड़,

ब्विेति जब से कनि स्या छ क्या छ ।।17।।
प्यारी सदेई नि बुलाई मैत,
बचीं च वा या मरिगे नि सूणी।
खबर नि सारऽ वख दूर देश।
सांसो नि कर्दो वख जाण को क्वी ।।18।।
वियोग प्यारी सहदेइ को त,
कठोर छाती करि सारे मैं न।
बड़ी खऽरी खाइ क पुत्र पैतो,
हा दैब! यो भी अब तू नि रखदो ।।19।।
सदेउ मेरा छइ तू अदान,
कनाइ जैलो तख धौळि पार?
झाड़े बणाई घन घोर घऽणे,
स्यू बाघ भालू छन जां डुकर्ना ।।20।।
वे दूर को त्वे रसता बतालो?
कू भालु बाघू सिउ से बचालो?
त्वै भूक मेरा लगली सदेऊ,
हे बाबु, खाणो तख त्वै को देलो ।।21।।
बिलाप कर्दे धडकेद छाती,
औंदे जिऊ मां तब सोच तैं का।
“होलो सदेऊ भड़ वीर भारी,
हे झालिमाली करि तै कि रक्षा” ।।22।।
“आंखी त माता रसता बताली,
जांघा तराली नदि और नाला।
भुजा ये मेरी सिउ बाघ मार्ली,
छेवी बचाली मई झालि माली ।।23।।
पकेदे माता तु कलेउ मैं कू,
बऽरो धरीदे तु त बोइ मै कू।
माता तु बैणी कु पकेदे मेरी,
स्वाला पकोड़ा अर रोट आर्सा ।।24।।
बणों तु माता बहिणी कु मेरी,
टाल्खी व आंग्ड़ी अर घाघरी भी।
बैणी कु घूलो अपणी त मैत्या,

कलेउ कंडी कपड़ों कि छाल'' ।।25।।
सैदू न पैर्‌यो भड़्वालि जामो,
बांधी कमर मां तलवार अप्‌णी।
धर्‌याले तैं न अलगोजा मोछंग्‌,
देखेंद खैदू रण बांकुरो सी ।।26।।
बांसूळि मोछंग्‌ त बजौंद सैदू,
देखेंद सैदू कनो बांको खस्या।
देखी भलो स्यो रंग रूप अप्‌णो,
नाच्यो सदेउ जनु मोर बणु मा ।।27।।
टेकी क माथो चरणू मा मां का,
ध्याई हृदै मां कुल इष्टदेवी।
वै राठ काळा बिटि सैदु पैट्‌यो,
मनौण मा भी लगे झालिमाली ।।28।।

(4)

साम्णे छ वैका घनघोर बऽण,
लग्‌ले व झाड़ि घनघोर धऽणी।
घऽणी अन्धेरी छन बीच जौं का,
सुई छिरक्‌दी निं छिरकदो घाम ।।1।।
सैदू को सांसो अर इष्ट वेको,
बतौद पैडो व लिजांद वै कू।
तै कू तरौऽद नदि और नाला,
डांडा व कांठा भि लंघौंद वै कू ।।2।।
पैंछीगे सैदू घन घोर बऽण,
घुर्णा छया स्यू जख बाघ भालू।
थ्कर्णऽसुरज्‌ की जख नी छिरक्‌दी,
नी देंदि बाटो लगुले व झाड़े ।।3।।
तैं भालु शेरू कु भगै क मारी,
झाड्‌यों लगॅल्यों बिच छिकि छार्की।
बढ़यों अगाड़ी रसता लगैं की,
ग्ंगाड़ पौंछ्यों सहदेउ भऽड़ ।।4।।
क्या खूब रै छ दुइ धारु बीच,
हर्‌यां भर्‌यां खेतु न देणि शोभा।

क्या फूल फूल्यां छन भांति भांती,
सुगन्ध जौं की अति दूर फैलीं ।।5।।
भौंरा भि गुँज्णां छन फूलु फूलू,
पंछी त बास्णां जख डाळि डाळयों।
हळया रयों मां छन गीत गाणां,
पूजा छ होणी तख मन्दिरू मां ।।6।।
राजा व राणी महली मुसद्दी,
विशाल कोठ्यों व कचेरियों मां।
हाथी व घोड़ा पल्टन रिसाला,
तख दौड़ना छन परेट कर्ना ।।7।।
जोगी व जंगम छन वेष धारी,
होला तहां बामण वेद-पाठी।
चोरो उचच्का छन गांठ-कट्टा,
होंदान फूलू बिच ज्यों कि कांटा ।।8।।
बागो बगीचा बगवान भारी,
फूलू फलू ते छन जक्क होयां।
बाजार चौपड़ को छ दूर फैल्यूँ,
ब्यौपार नाना विध जां छ होणू ।।9।।

2.6 सदेई गीत पर आधारित अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. **किसे अपना मायका याद आता था?**
2. **सदेई ने किस वृक्ष के पौधे को मायके से लाकर ससुराल में लगाया?**
3. **सदेई ईश्वर से क्या मांगती है?**
4. **सदेई के भाई का नाम क्या था?**

2.7 सारांश

एक पहाड़ी बाला सदेई जो हर समय अपने मायके की 'खुद' में खोई रहती है। अपने मायके से एक 'सिलंग' के पेड़ के पौधे को लाकर अपने ससुराल में रोप देती है। वह उस पौधे से भावनात्मक रूप से जुड़ी रहती है। उसे अपने मायके की सहेली मानकर उससे अपनी खुद बाँटती है। उसे पल्लवित-पुष्पित होते देख मायके की यादों में खो जाती है।

बसन्त की ऋतु आ गई है। सभी पौधों पर कौंपले फूट गये हैं। पौधे धीरे-धीरे पुष्पित होने लगे हैं। धरा पर चारों ओर फूलों की खुशबू महक रही है। तरह-तरह के फूल खिले हैं। सिलंग का पौधा भी फूल कर अपनी खुशबू बिखेर रहा है। पंछी पेड़ों पर गीत गा रहे हैं। हल्या खेतों में मस्त होकर गा रहे हैं तो घसेरियाँ पहाड़ियों पर घास काटते-काटते गीत गा रही हैं। वे गीतों से ही आपस में वार्तालाप कर रही हैं। भौंरे फूलों के ऊपर मंडराते हुए गुंजन कर रहे हैं। प्रकृति भी खुशी में खिलखिलाकर हँस रही है।

ऐसे में सदेई सिलंग के पेड़ के नीचे बैठकर प्रकृति की इस अद्‌भुत छटा को निहार रही है। उसे अपने मायके की याद आ रही है। मायके के पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों, पहाड़ियों, नदियों व अपनी सहेलियों की याद आ रही है।

वह खुद में व्याकुल होकर गाती है, 'हे ऊँची-ऊँची पहाड़ियो, तुम कुछ झुक जाओ। हे घने चीड़ के वृक्षो तुम कुछ विरल हो जाओ। मुझे अपने मायके की खुद लगी है। मुझे अपने बाबा जी का देश देखने दो। वह पवन से कहती है कि तू जा और मेरी माँ को मेरा संदेश देके आ। हे कफ्फू-हिलांस तुम मेरे मायके के गीत गाओ। ये ऋतुएँ आयेंगी-जायेंगी पर मेरी दशा हमेशा एक सी ही रहेगी। बसंत माह में सभी के मायके से भाई अपनी बहनों से मिलने आयेंगे, कपड़े व कलेवा लायेंगे पर मुझ अभागिन से मिलने कौन आयेगा। मेरा तो कोई सगा भाई है ही नहीं। मैं बाल-बच्चे वाली भी हो गई हूँ पर आज तक मेरे मायके से कोई मेरी सुध लेने तक नहीं आया।

वह अपने मायके की देवी का सुमिरन करती है व उनके सामने अपनी पीड़ा रखती है, उनसे प्रार्थना करके एक भाई मांगती है। देवी उसके स्वप्न में आकर उससे कहती है कि तेरा सदेऊ नाम से एक भाई होगा। सपने में यह सब देखकर 'सदेई' बहुत प्रसन्न हो जाती है। वह यह सब बातें सिलंग के पेड़ से कहती है।

देवी के वचनानुसार सदेई के मायके में उसका एक भाई हो जाता है। उसके मायके में खूब खुशियाँ मनाई जाती हैं। किन्तु सदेई को इस सब की भनक तक नहीं लगती। सदेऊ बहुत जल्दी-जल्दी बड़ा होता है एक दिन वह अपनी माँ से पूछता है। "माँ औरों की बहनें अपने-अपने मायके आती हैं मेरी बहन क्यों नहीं आती है? क्या मैं इतना अभागा हूँ कि मेरी कोई बहन ही नहीं है?"

उसकी माँ उससे झूठ कहती है कि "बेटा, तेरी कोई बहन नहीं है। बहन होती तो मायके क्यों नहीं आती।"

उसी रात सदेऊ को स्वप्न होता है। जिसमें वह सिलंग के पेड़ के नीचे उदास एक महिला को देखता है जो राह को ताक रही है व उसकी अश्रुधारा रुकने का नाम नहीं ले रही है। उसके पास दो बच्चे भी बैठे हैं जिनकी शक्ल सदेऊ से मिल रही है।

तभी सदेऊ की नींद टूट जाती है। वह कहता है यही मेरी बहन है। मैं अब उसे उसके मायके अवश्य लाऊंगा। वह अपनी माँ से कहता है। "सच बातओ माँ, मेरी बहन कहाँ रहती है? मैंने उसे देखा है। जब तक तू नहीं बतायेगी, मैं अन्न का एक भी दाना नहीं खाऊंगा।"

फिर उसकी माँ सदेऊ को पूरी कहानी बताती है। वह बताती है कि वह बहुत दूर एक निर्जन देश में रहती है जहाँ जाना बहुत मुश्किल है। माँ के मना करने पर भी सदेऊ कहता है कि वह जहाँ भी रहती है मैं उसे मिलने अवश्य जाऊंगा।

सदेऊ की राह में बहुत सी आपदायें आती हैं परन्तु वह उन सभी आपदाओं से पार पाते हुए अपनी बहन के ससुराल पहुँच जाता है। उसे देखकर पहले तो सदेई को यकीन ही नहीं होता किन्तु सदेऊ पर अपनी शक्ल सूरत देख वह बहुत प्रसन्न हो जाती है। उसकी खूब आवभगत करती है। अपने ईष्ट को धन्यवाद देती है।

फिर सदेऊ उसे अपने सपने वाली बात बताता है और कहता है कि आपसे मिलने के पश्चात् मेरी सारी इच्छाएँ पूर्ण हो गई हैं। वह उसे अपने साथ लाया कलेऊ व कपड़े देता है बच्चे मामा को देखकर प्रसन्न हैं।

2.8 शब्दार्थ

1. सिलंग- वृक्ष की एक प्रजाति, 2. चमोला- चौबाटा , 3. जिकुड़ी- हृदय, 4. हिलांस- एक पक्षी, 5. कुळैं- चीड़, 6. अंद्वार- शक्ल, 7. डुकर्ना- दहाड़ना।

कवि के आधार पर प्रश्नों के उत्तर- 1. 06 जून, 1875, 2 इलाहाबाद विश्वविद्यालय से, 3. पं० तारादत्त गैरोला ने, 4. 28 मई, 1940 में

कविता के आधार पर प्रश्नों के उत्तर- 1. सदेई को , 2 सिलंग वृक्ष का पौधा, 3. भाई, 4. सदेऊ

2.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. सदेई- पं० तारादत्त गैरोला

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सदेई गीति काव्य का सार अपने शब्दों में लिखिए।
2. भाई-बहन के आपसी प्रेम की कोई अन्य कहानी लिखिए।

इकाई- 3

भजन सिंह 'सिंह'- खुदेड़ बेटी

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 कवि परिचय

3.4 खुदेड़ बेटी (गीत)

3.5 सारांश

3.6 शब्दार्थ

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रन्थ

3.9 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

भजन सिंह 'सिह' जी की रचना 'खुदेड़ बेटी' करुण रस का एक मार्मिक गीत है जिसमें ससुराल में एक विरहिणी बाला अपने प्रियजनों के वियोग में उनसे मिलने की उत्कंठा लिए हुए है। ससुराल के वेदनात्मक जीवन में मायके के स्नेहशील वातावरण की सुखद कल्पना उसे सन्तोष देती दीख पड़ती है। वह अपने प्रियजनों (माँ-पिता, भाई, बहन, पति, सहेलियों आदि) के साथ ही मायके के वन पर्वतों, पशु-पक्षियों, फल-फूलों सहित प्रकृति से मिलने के लिए अति व्याकुल व विह्वल है। उसे इन सबकी 'खुद' बरबस सताती है। बाल्यकाल में दूर गाँव में विवाह हो जाना जीवन की कठोरताओं के बीच ससुराल में दुखपूर्ण जीवन बिताते हुए मायके का निरन्तर याद आना, पारिवारिक संकट के बीच पति का विछोह व ससुराल पक्ष का कटु व्यवहार सभी उसकी विरह वेदना को ओर बढ़ाते हैं। सास द्वारा यातना, गाली उसके हृदय में बाण की भाँति चुभती हैं। ससुराल में इन सभी यातनाओं के कारण वह बेबस होकर रो देती है और अपने प्रियजनों व मायके की खुद में व्याकुल होकर ससुराल के निर्जन वन में खुदेड़ बेटी का यह करुणामय गीत उसके हृदय से प्रस्फुटित होकर प्रकृति में गूँजता है। एक दौर था जब प्रत्येक घर में ऐसी खुदेड़ बेटी होती थी, वह पीड़ा का पर्याय थी। अभाव, पीड़ा, विरह, यातना के बावजूद भी वह घर गृहस्थी व पतिव्रत धर्म का पालन करती थी। यह पहाड़ी नारी की एक विशिष्ट पहचान है। 'खुदेड़ बेटी' वास्तव में प्रेम और संघर्ष समय-समय व स्थान-स्थान पर सदैव पहाड़ी नारी के द्वारा अभिव्यक्त और वह गीतों के रूप में सहजता से एवं स्वतः स्फूर्त रूप में व्यक्त हुआ है। गढ़वाली

भाषा में यूं तो अपनी पीड़ा, व्याकुलता, संघर्ष व 'खुद' को अभिव्यक्त करने के लिए साहित्य की अनेकों विधाओं का प्रयोग हुआ है किन्तु गीत सबसे प्रभावी प्रमुख माध्यम रहा है। गीतों की इसी विशिष्टता, सर्वग्राह्यता व स्वीकार्यता के कारण ही शायद सभी ने व विशेष रूप से विरहणियों ने इन्हें अपनाया। 'खुदेड़-बेटी' खुदेड़ गीतों को गाकर अपना मन कुछ हल्का कर लेती थी। अपने मायके से दूर ससुराल में असीम कठिनाइयों के मध्य दुखपूर्ण जीवन बिताते हुए स्वजनों को स्मरण करती है। ससुराल में वह बहुत श्रमसाध्य कार्य करती है। पति का दुर्व्यवहार अथवा विछोह व सास की बात-बात पर प्रताड़ना सहना जैसे उसकी नियति हो। घर की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए तथा साहूकार का ऋण चुकाने के लिए विवाह के कुछ दिन बाद ही पति का परदेश चला जाना उसकी व्याकुलता को और बढ़ा देता है। ब्वारि (बहू) के प्रति क्रूर व्यवहार सास की सर्वत्र अधिकार भावना जिसके कारण अपने पिया का घर भी कारागार प्रतीत होता है। अक्सर ससुराल में सास अपनी बहू के साथ बुरा बर्ताव करती और उन्हें कठोर यातनाएँ देती। कुछ तो उन यातनाओं को सहन नहीं कर पातीं और कोई पेड़ पर फाँसी लगाकर, कोई नदी में कूद कर अपने प्राणों को त्यागने के लिए मजबूर हो जातीं लेकिन अधिकांश तो इसी पीड़ा और यातना के साथ जीते हुए संघर्ष करतीं, तब जीवन की इस लम्बी लड़ाई में ऐसे खुदेड़ गीत ही उनके हथियार व सहारे होते। गढ़वाली लोकमानस में ऐसी खुदेड़ बेटियों की अनेकों दास्तानें विद्यमान हैं जो सदियों से गायी व सुनाई जा रही हैं। एक दौर ऐसा भी था जब लगभग समग्र गढ़वाली साहित्य पद्य व गद्य 'खुद' के इर्द-गिर्द घूमता था क्योंकि 'खुद' ही उस दौर का ज्वलन्त व प्रमुख विषय था। इसलिए अधिकांश साहित्यकारों ने इसे ही अपने साहित्य में स्थान दिया। देशकाल परिस्थिति का साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ता है। और साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है। इसलिए उस दौर के साहित्य में 'खुद' प्रमुख रूप से उजागर होती है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान सकेंगे कि :-

- एक पहाड़ी नारी को विषम परिस्थितियों में किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।
- पहाड़ी नारी को जीवन में कितना संघर्ष करना पड़ता है।
- पहाड़ की नारी प्रकृति से किस तरह अपनी पीड़ा को साझा करती है।
- पहाड़ की नारी अपने प्रियजनों व मायके से कितना लगाव रखती है।

3.3 कवि परिचय

गढ़वाली भाषा के प्रसिद्ध कवि भजन सिंह 'सिंह' जी का जन्म 29 अक्टूबर, 1905 को ग्राम कोटसाड़ा, पट्टी सितोनस्यूं जिला पौड़ी गढ़वाल में हुआ। इनके पिताजी का नाम श्री रतन सिंह बिष्ट था जो कि पेशे से अध्यापक थे। जन्म लेते ही माता जी के स्वर्ग सिधारने के कारण बुआ

जी के असीम लाड-प्यार व पिताजी के अनुशासन में इनका लालन-पालन हुआ। सिंह जी की प्रारम्भिक शिक्षा पौड़ी के मैसमोर हाईस्कूल में हुई। 1925 में आप स्कूल छोड़कर लाहौर चले गये। 07 अप्रैल 1927 को आप सेना (रॉयल गढ़वाल राइफल्स) में भर्ती हो गये। 09 दिसम्बर 1936 को आपका विवाह पवित्रा देवी से हुआ। लाहौर में ही आप क्रान्तिकारी युवकों के सम्पर्क में आये व उन्हीं के कहने पर सेना में राष्ट्रीय विचारों के प्रचार-प्रसार हेतु क्लर्क के रूप में भर्ती हो गये। सेना में उन दिनों साहित्यिक गतिविधियों पर पूर्णतः प्रतिबन्ध था। सेना में रहते ही आपका परिचय वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली से हुआ। आप दोनों ने मिलकर सैनिकों में राष्ट्रीय चेतना का प्रसार किया।

सेना में रहकर ही आपने गुप्तचर से अपना प्रथम हिन्दी मुक्तक 'अमृत वर्षा' प्रकाशित किया। जिसके प्रकाशन में आपकी बटालियन के ही सैनिक सहयोगियों ने आर्थिक सहायता की थी। सेना में रहते ही आपने अपनी पहली गढ़वाली पुस्तक 'सिंहनाद' (1930) प्रकाशित की। उन्होंने द्वितीय विश्व युद्ध में एक सैनिक के रूप में भाग लिया था। 31 मई 1945 को आप सेना से सेवानिवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के पश्चात् 1945 से 1947 तक आप डी.ए.वी. पौड़ी व 1962 से 1968 तक इण्टर कॉलेज कोट में लिपिक रहे। जिला परिषद के सदस्य रहते आपने कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित करवाये।

आप उच्चकोटि के विचारक, इतिहासकार, समाज सेवक व साहित्यकार थे। आपके गढ़वाली व हिन्दी भाषा में अनेकों लेख, शोधग्रंथ व पुस्तकें प्रकाशित हुई। आपकी 'सिंहनाद' (1930) व 'सिंह सतसई' (1985) मूलतः गढ़वाली भाषा की काव्य कृतियाँ हैं। परन्तु अपनी इन दोनों पुस्तकों की भूमिका में आपने गढ़वाली भाषा के बारे में विस्तार से लिखा है। 'सिंह सतसई' में आपके 1259 दोहे प्रकाशित हैं।

आपकी 'गढ़वाली लोकोक्तियाँ' नामक पुस्तक 1970 में प्रकाशित हुई। हिन्दी में इनकी इतिहास पर लिखी पुस्तक 'आर्यों का आदि निवास मध्य हिमालय' बहुत चर्चित पुस्तक रही। सामाजिक बुराइयों को समूल उखाड़ने के लिए आपने कविताएँ लिखीं जिनमें अनोखा व्यंग्य दिखता है। गढ़वाली साहित्य में स्वतंत्रता से पूर्व (1926 से 1950) का युग 'सिंह युग' के नाम से जाना जाता है। भजनसिंह 'सिंह' जी का देहान्त 10 अक्टूबर, सन् 1996 में हुआ।

3.4 जीवनी के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. भजन सिंह 'सिंह' जी का जन्म कब हुआ?
2. सेना में रहते भजन सिंह 'सिंह' जी ने अपनी कौन-सी गढ़वाली पुस्तक प्रकाशित की थी?
3. 'सिंह' सतसई' नामक पुस्तक में कुल कितने दोहे हैं?
4. भजन सिंह 'सिंह' जी का देहान्त कब हुआ?

3.5 खुदेड़ बेटी

बोड़ि-बोड़ी ऐगे ब्वे देख पूस मैना।
गौंकि बेटी-ब्वारि ब्वे मेतु आइ गैना
मैतुड़ा बूलालि ब्वे बोई होलि जौंकी।
मेरि जिकुड़ि मा ब्वे कुयेड़ी सि लौंकी।
मेल्वड़ी वासलि ब्वे डाड्यूं चैत मास।
मौळि गैने डाळि ब्वे फूलिगे बुरांस।
माळ की घुघति ब्वे मैत आंदि होली।
डाल्युं मां हिलांस ब्वे गीत गांदि होली।
उलरि मैनो कि ब्वे ऋतु बोड़ि ऐगे।
हरि ह्वेने डांडि ब्वे फूल फूलि गैने।
घुगति घुरलि ब्वे डाल्यु-डाल्यु मांजअ।
मैतुड़ा बुलालि ब्वे बोई होलि जौंकीं
मेरि जिकुड़ि मा ब्वे कुयेड़ी सि लौंकी।।
लाल बणी होलि ब्वे काफुळु कि डाळी।
लोग खान्दा होला ब्वे लूण राळि राळी।
गौंकि दीदी-भुलि ब्वे जंगुळ मा जाळी।
कंडि भोरि-भोरि ब्वे हिंसर बिराली।
‘बाडुळि लगालि ब्वे आग भभराली।
बोई बोदि होलि ब्वे मैत आलि-आली
याद औंद मीतैं ब्वे अपड़ा भुलौंकी।
मेरि जिकुड़ि मा ब्वे कुयेड़ी सि लौंकी।।
ल्यालि कूरो गाडिब्वे गौं कि बेटि ब्वारि
हैरि-भरी होलि ब्वे गेंउ-जो, कि सारी
यं बार मैनों कि ब्वे बार ऋतु आली
जैंकि बोई होलि ब्वे मैतुड़ा बुलालि
मैतु ऐ-गै होली ब्वे दीदि-भूलि गौंकी
मेरि जिकुड़ि मा ब्वे कुयेड़ी सि लौंकी।।
स्वामिजी हमेशा ब्वे परदेश रैनी
साथ का दगड़या ब्वे घअर आई गेनी
ऊंकु प्यारो ह्वे ब्वे विदेशू को वास
बाटा देखी-देखी ब्वे गैनि दिन-मास
बाडुळि लागलि ब्वे आग भरभरालीा

या त घर आला, ब्वे या त चिट्ठी आली
चिट्ठी भी नी आई ब्वे तब बटी तौंकी
मेरि जिकुड़ि मा ब्वे कुयेड़ी सि लौंकी।।
बाबाजी भी मेरा ब्वे निरमोह रैनी
जौन पाथो भोरि ब्वे रूप्या मेरा खैनी
गालि देंद सासु ब्वे मैं बाबु की भारी
बासि खाणू देंद ब्वे कोलि मारी-मारी
बोद-तेरो बाबु ब्वे जो रुप्या नि खोदो
मेरो लाड़ो-प्यारो ब्वे बिदेशू नि रांदो।
बाबा न बणाये ब्वे इनि गति मेरी।
ज्वानि त उड़िगे ब्वे बाटो हेरी-हेरी।
चिट्ठी भी नी आई ब्वे तब बटी तौंकी।
मेरि जिकुड़ि मा ब्वे कुयेड़ी सि लौंकी।।

3.6 अभ्यास प्रश्न

1. **खुदेड़ बेटी किस रस का गीत है?**
2. **खुदेड़ बेटी किसे सम्बोधित करके गा रही है?**
3. **खुदेड़ बेटी को किस-किस की याद आ रही है?**
4. **खुदेड़ बेटी अपनी दुर्गति के लिए किसे कोस रही है?**
5. **इस गीत से किस कुप्रथा का पता चलता है?**

3.7 सारांश

'खुदेड़ बेटी' कवि भजन सिंह 'सिंह' जी का अत्यन्त मार्मिक व कर्णप्रिय गीत है। जिसमें अपने मायके से दूर के गाँव में विवाहित एक तरुणी पहाड़ी नारी की व्यथा-कथा का मर्मस्पर्शी वर्णन है। आम तौर पर यह उस दौर का गीत है जब बाल्यावस्था में ही लड़कियों का विवाह हो जाता था। कभी-कभी अपनी उम्र से दुगने-तिगुने उम्र के व्यक्ति के साथ भी ग्रामीण कन्याएँ ब्याह दी जाती थीं। तब अपने मायके और अपने प्रियजनों की खुद उन्हें बहुत सताती थी। वे अक्सर उनकी याद में खुदेड़ गीत गाती थीं। ऐसी ही एक नायिका 'खुदेड़ बेटी' है जो अपनी माँ को सम्बोधित करके कहती है कि हे माँ, देख पुनः लौटकर पौष का महीना आ गया है और सभी बेटी-बहुएँ अपने-अपने मायके चली गयी हैं। किन्तु मायके वही भाग्यशाली बेटियाँ जायेंगी जिनकी माँ होगी जिसकी माँ न हो उसे पीहर में आखिर कौन बुलाएगा। माँ न होने और मायके न जाने के कारण मेरे हृदय में मानो कोहरा सा छा गया है अर्थात् दुख-संताप घिर गया है। उसे रह-रह कर अपने

मायके के खेत-खलिहान पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, फूल-फल, उपवन आदि याद आते हैं और सताते हैं। मेरे मायके के पर्वतों में वह सुन्दर पक्षी 'मेल्वड़ी' गीत गा रही होगी, जंगलों में पेड़ों पर नयी-नयी कोंपलें आ गई हैं। बुरांस के फूल खिल गये हैं। यहाँ तक कि इस मनभावन ऋतु में मैदानी क्षेत्रों से घुघती भी अपने पर्वत प्रदेश के मायके में आ गई होगी। मधुर गीत गाने वाली हिलांस भी पेड़ों में गीत गा रही होगी।

इस उल्लास व उमंग भरे महीने में वह प्रेम ऋतु फिर लौट आई है जिसमें चारों ओर पेड़-पर्वत हरे हो गये हैं तथा चहुं ओर खिले फूल मन को और व्याकुल कर रहे हैं। इस मिलन की ऋतु में वही बेटी मायके जायेगी जिसकी अपनी माँ होगी किन्तु मेरे हृदय में तो कोहरा सा छा रहा है। वहाँ काफल से भरे पेड़ लाल हो गये होंगे अर्थात् उन पर काफल पक गये होंगे। लोग काफल तोड़ के ला रहे होंगे और उनमें नमक मिलाकर खा रहे होंगे। मेरी सभी दीदी-भुलियाँ जंगल जा रही होंगी और वहाँ से मीठे रसीले 'हिंसर' कंडी भर-भर के ला रही होंगी। किन्तु मेरी याद में जब माँ को 'बाडुली' लगेगी और चूल्हे में आग भरभरायेगी तब माँ यह अंदाज लगा रही होगी कि मेरी प्रिय लाडली मायके आ रही होगी, जरूर आ रही होगी। मुझे अपने छोटे भाई-बहनों की याद सताती है। जिसके कारण मेरे हृदय में जैसे कोहरा सा छा जाता है अर्थात् मन पीड़ा से भर जाता है। गेहूँ की फसल से भरे खेतों में 'कूरू' खरपतवार उगा होगा। उसे गाँव की बेटी-बहुएँ उखाड़ कर ला रही होगीं और अपने मवेशियों को खिला रही होगी।

गेहूँ और जौ के हरे-भरे खेत लहलहा रहे होंगे और प्रकृति की सुषमा में चार चाँद लगा रहे होंगे। यहाँ मेरे मायके में बारह महीने में बारह ऋतुएँ आयेंगी, प्रत्येक ऋतु का अपना उल्लास सुखानुभूति देने वाला होता है। इन पर्वों के उल्लास को जीने के लिए गाँव की सभी दीदी-भुलियाँ मायके आ गई होंगी। किन्तु मायके वही जायेंगी जिन्हें उनकी माँ बुलायेंगी। किन्तु मेरे हृदय में दुख का कोहरा उमड़-घुमड़ रहा है, दुख के बादल छा रहे हैं। वह स्वयं को कोसती हुई कहती है, मुझ अभागिन के पति को भी परदेश ही प्यारा है। वे हमेशा मुझसे दूर परदेश ही बसे रहे। साथ के मित्र तो उनके कब के घर आ चुके हैं किन्तु मैं तो वर्षों से उनकी बाट जोह रही हूँ। उन्हें तो विदेश ही भा गया है उन्हें मेरी तनिक भी चिन्ता नहीं है। उनकी प्रतीक्षा में दिन-मास बीतते गये किन्तु वे लौटकर घर नहीं आये। आज मैं उनकी याद में अत्यन्त व्याकुल हो गयी हूँ। आज मुझे 'बाडुली' लग रही है। मेरे चूल्हे की आग भरभरा कर जल रही है। बाडुली का लगना, चूल्हे की आग का भरभरा कर जलना किसी प्रियजन की याद का द्योतक माना जाता है। इसलिए मुझे पूर्ण विश्वास है कि या तो वे स्वयं आयेंगे या फिर उनकी चिट्ठी आयेगी। एक लम्बा अरसा बीत चुका है उनकी कुशल क्षेम मिले न जाने कितना लम्बा वक्त बीत चुका है उनकी चिट्ठी आये हुए बल्कि जब से वे परदेश गये हैं तब से उनका कोई पत्र, कोई कुशल क्षेम नहीं आई। इस कारण मैं अत्यन्त दुखी हो गयी हूँ। मेरे हृदय में दुख त्रास के बादल छा रहे हैं। जो मुझे अत्यधिक विह्वल कर रहे हैं।

वह अपने लोभी पिता को भी उलाहना देती हुई कहती है कि, मेरे पिता! तुम बहुत निर्मम, निष्ठुर रहे जो तुमने मेरे विवाह में वर-पक्ष से रुपये लिए। एक तरह से तुमने मेरा सौदा किया। तुमने मुझे खिलौने की तरह समझा व बेचा। तुमने मेरे बदले 'पाथा' भरकर रुपये खाये, तब जाकर मेरा विवाह दूर देश किया। तुम्हें सिर्फ धन माया से मतलब था। तुम्हारा मुझसे प्रेम न था। सास भी मेरी बहुत क्रूर है। बात-बात पर मुझे प्रताड़ना व यातना देती है। भर पेट खाना भी नहीं देती। मेरे साथ बहुत पैशाचिक व्यवहार करती है। गालियाँ देती है। कहती है, तेरा बाप यदि रुपये न खाता तो हम कर्ज में न डूबते और उस कर्जे को उतारने के लिए मेरा बेटा परदेश नहीं जाता। यह सब तेरे बाप का किया-कराया है। मेरे पिता ने भी मेरी ऐसी दुर्गति बनाई जो सही नहीं जाती। मेरी जवानी केवल अपने पति की बाट जोहते ही उड़ गई है। उनका आना तो दूर उनकी कोई चिट्ठी तक नहीं आई। उनके विछोह में मेरी जो हालत है उसे मैं ही जानती हूँ। मेरे निश्छल हृदय पर उनके वियोग में पुनः कोहरा-सा छा रहा है, यह पीड़ा मेरे लिए असहनीय है।

3.8 शब्दार्थ

मैतुड़ा- मायका, जिकुड़ि- हृदय, कुयेड़ि- कोहरा, लौंकि- छा गई, मेल्वड़ि- एक पक्षी विशेष, डांड्यूं- पहाड़ों, हिलांस- एक पक्षी, घुघती- फाख्ता, उलयरि- प्रेम व उल्लास से परिपूर्ण, काफल- एक पहाड़ी जंगली फल, हिंसर- एक पहाड़ी जंगली फल, बाडुळि- हिचकी, अपने प्रियजन के याद करने पर आने वाली हिचकी, भभराली- किसी प्रियजन के याद करने पर आग का भरभराना (आवाज करना), भुलौंकी- छोटे भाइयों की, कूरो- एक विशेष प्रकार का खरपतवार, सारी- खेतों का समूह, दगड्या- दोस्त (साथी), तौंकि- उसकी, पाथो- माप विशेष, निर्मोही- निष्ठुर, गति- दुर्दशा, दुर्गति, बाटो- राह, हेरि-हेरी- निहारते-निहारते।

गीतकार की जीवनी पर आधारित प्रश्नों के उत्तर- 1. 29 अक्टूबर 1905, 2 सिंहनाद, 3. 1259 दोहे, 4. 10 अक्टूबर 1996 में।

गीत पर आधारित अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. करुण रस, 2. अपनी ब्वे (माँ) को, 3. अपने मायके के भाइयों, पक्षियों व फलों की, 4. अपने बुबा (पिता) को, 5. बाल विवाह व बेटी के रुपये लेने की कुप्रथा का।

3.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. सिंहनाद- भजन सिंह 'सिंह'
2. सिंह सतसई- भजन सिंह 'सिंह'
3. अंग्वाळ- मदन मोहन डुकलाण एवं गिरीश सुन्दरियाल,

4. गढ़वाली भाषा और उसका साहित्य- डॉ० हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भजन सिंह 'सिंह' जी का जीवन परिचय लिखिए।
2. खुदेड़ बेटी गीत का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
3. खुदेड़ बेटी गीत के आधार पर पहाड़ी नारी के संघर्ष का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

इकाई- 4

चयनित गढ़वाली पद्य

अबोधबन्धु बहुगुणा - जन्मभूमि, शैलोदय, मनखी, घोल, दैसत

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 कवि परिचय

4.4 अभ्यास प्रश्न

4.5 जन्मभूमि, शैलोदय, मनखी, घोल, दैसत

4.6 अभ्यास प्रश्न

4.7 सारांश

4.8 शब्दार्थ

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.10 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

गढ़वाली भाषा के सार्वकालिक श्रेष्ठ रचनाकारों में से एक प्रसिद्ध रचनाकार हैं अबोधबन्धु बहुगुणा। अबोध जी ने गढ़वाली साहित्य में अद्वितीय योगदान दिया है। गद्य एवं पद्य दोनों विधाओं में उल्लेखनीय साहित्य रचा है। साथ ही साहित्येतिहास, भाषा विज्ञान, समीक्षा व साहित्य संकलन का भी महत्वपूर्ण कार्य किया है।

इस इकाई में हम उनकी कुछ प्रतिनिधि रचनाएँ कविताएँ क्रमशः जन्मभूमि, शैलोदय, मनखी, घोल व दैसत पढ़ेंगे अर्थात् इन पाँच कविताओं के माध्यम से उनकी कल्पनाशीलता व रचनाधर्मिता की उत्कृष्टता देख पायेंगे। जन्मभूमि कविता अपनी मातृभूमि की वन्दना है। जिसमें मातृभूमि के प्रति अनुराग की भावना दृष्टिगोचर होती है। शैलोदय एक सुन्दर गेय रचना है। जागरण व आशा का संचार करता यह गीत शैलों से निःसृत होकर घाटियों तक पहुँचता है। सभी जड़-चेतन पदार्थों को जागृत करता है। 'कर्म ही पूजा है' मन्त्र का उद्घोष करता है। शैलोदय हास, सुख-समृद्धि और उल्लास का उदय है, प्रेम प्रकाश है। मनखी कविता एक शानदार दार्शनिक रचना है जो किसी मेहनती आदमी के इर्द-गिर्द घट रही घटनाओं, रिश्ते-नातों की पड़ताल करती कविता है। इस कविता में मनुष्य स्वयं को एक पेड़ का प्रतीक मानता है जो कि हरा-भरा फल-फूलदार है। उसकी हरियाली एवं फल-फूलों के पीछे उसका संघर्ष है, मेहनत है। पर उसके अपने-पराये उससे क्या उम्मीद रखते हैं, उससे क्या स्वार्थ सिद्ध करना चाहते हैं, उनका भी बेबाक वर्णन करती है यह कविता। घोल पलायन की पीड़ा से उपजी कविता है। गढ़वाल से रोजी-रोटी की खातिर जिन्होंने

पलायन किया वो सदा के लिए परदेश के ही हो गए। पलायन के पश्चात् उत्पन्न परिस्थितियों की मार्मिक अभिव्यक्ति है ये कविता। दैसत एक आशंका है, एक भय है जो देवभूमि की शान्ति को भंग करने के कुत्सित कार्यों की ओर संकेत करती है। इस रचना में निरीह पशु-पक्षियों की गहरी संवेदनाएँ देखी व सुनी जा सकती हैं। साथ ही व्यवस्था पर भी प्रश्न चिह्न खड़े करती है यह कविता। निष्कर्षतः प्रत्येक कविता अपने शिल्प एवं तेवर की उल्लेखनीय रचना है।

4.2 उद्देश्य

- गढ़वाली भाषा की शब्द सम्पदा जान पायेंगे।
- गढ़वाली में विभिन्न विषयों पर उत्कृष्ट साहित्य पढ़ व समझ पायेंगे।
- अबोध जी द्वारा गढ़वाली साहित्य में किए गए विपुल रचनाकर्म के विषय में जानेंगे।
- पारम्परिक शैली से लेकर आधुनिक काव्य शैली के विषय में जान पायेंगे।

4.3 जीवन परिचय

गढ़वाली भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार अबोधबन्धु बहुगुणा का जन्म 15 जून, 1927 में ग्राम झाला, पट्टी चलणस्यूं, जिला पौड़ी गढ़वाल में हुआ। आपका बचपन का नाम नागेन्द्र प्रसाद था। आपके पिताजी पं० मित्रानन्द बहुगुणा एक प्रसिद्ध वैद्य थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव में ही हुई। खिर्सू से मिडिल पास करने के बाद आपने इण्टर तक की पढ़ाई मेसमोर इण्टर कॉलेज, पौड़ी से की। नागपुर विश्वविद्यालय से आपने राजनीति विज्ञान और हिन्दी विषय में एम०ए० किया। भारत सरकार के कृषि एवं खाद्य विभाग में आपने हिन्दी सहायक से उपनिदेशक (राजभाषा) तक के पदों को सुशोभित किया। सन् 2004 में आपका देहान्त हुआ।

प्रकाशित कृतियाँ- गढ़वाली महाकाव्य- 'भुम्याळ', काव्यकृति- 'तिड़का', 'रणमंडाण', 'पार्वती', 'घोल', 'अंखपंख', 'दैसत', 'कणखिला', 'शैलोदय'; लोक गीत संग्रह- 'धुंयाळ'; लोककथा- 'लंगड़ि बकरी', 'कथा घालि कथगुली'; गद्य संग्रह-'एक कौंळि किरण', नाटक- 'माई को लाल', 'अंतिम गढ़'; कथा संग्रह- 'रगड्वात', 'कथा कुमुद'; उपन्यास- 'भुगत्यों भविष्य'; सम्पादन- 'गाड म्यटेकि गंगा', 'शैलवाणी'; भाषा- 'गढ़वाली व्याकरण की रूपरेखा'।

उपाधि और पुरस्कार- लोक भारती नागरिक सम्मान-1979, जयश्री सम्मान-1984, गढ़रत्न सम्मान-1991, काव्य भूषण सम्मान-2003, उ० प्र० सरकार द्वारा -1981, 1986, 1989 में सम्मान।

4.4 अभ्यास प्रश्न जीवनी पर आधारित

1. साहित्यकार अबोधबंधु बहुगुणा जी का जन्म कहाँ हुआ?

2. अबोधबंधु बहुगुणा जी ने एम० ए० कहाँ से किया?

3. अबोधबंधु बहुगुणा जी द्वारा गढ़वाली में लिखे महाकाव्य का नाम बताइए।

4. साहित्यकार अबोधबंधु बहुगुणा जी द्वारा लिखित गढ़वाली उपन्यास का नाम लिखें।

4.5 कविताएँ

जन्मभूमि

जन्मभूमि! मातृभूमि!
माँ हिंवाळ-वासिनी
तेरि पैंतुळ्यों प्रणाम
हे परणि उलारिणी।

तू उघाड़दी किवाड़
धर्ति मा उद्यौं कि बाढ़
बाछि-सी त्यरा खल्याण
रुम्क रौंद राम्हणी।

द्यखद त्यरि क्वदड़ि सार
चल्ल ह्यूँचळ्यौं हपार
छुणक्यळी छ दाथि, फंचि-
पर तु घास काटणी।

बगदि आँखियों कि गाड
माँ! त्यरो अथाह लाड
क्वाँसि छै बण्यी हिलाँस
बौणु-बौणु बासणी।

शैलोदय

दे शैलोदय! तू दर्शन दे

रुणझुण रागारुण ज्योति नई
मेरी घाट्यों मा बरखण दे।

भौत अंधेरो छ, भौत अंधेरो
वख नांग-भूख को, दैसत को
जलड़ा-जलड़ा तिमिर जिड्यूँ छ
तोड़ तु वेका बन्धन दे।

कर मुखरित धै लगै-लगै की
मनखी की खिन्न-पितीं वाणी
नई तमन्ना अर आशा की
स्हास लगीं स्याणी उफरण दे।

बिजाळ स्यियीं बनस्पतियों तैं
चचलाट मचौ तू चेतन मा
छौड़ौं तैं खितकण दे, बंसुळी-
घुरकण, बाछ्यों तैं बुरकण दे।

अदगद मा ठाडा मनखी तैं
पंत सुध्यौ, वेको हक बतलौ
गर्ज गरज पर बर्ख समय पर
'फुँडो फूक दशा' तैं हरचण दे।

मनखी

मि एक चळ्दो-फिर्दो वृक्ष छौं
जै पर अन्नै खाद-खुराक लग्द।
जैका जलड़ौं सणि रोज ब्यखुनि-सुबेर
ताति-ताति चा कि कुळ्यसौंन सिंचे जांद।

म्यरा पत्तौं पर सबेरौ घाम चल्कद
द्वफरा कि छैं ढळ्कदन
बर्खा तर्पर-तर्पर कर्यी छुटद
मी सणि हळंकरि हलोळणी रँदन
मी पर सिंसेर भक्क खदळो कुकर-सि बिल्कद!
बत्वणि मा असंदेक्यि/म्यरा फौंटा टुटदन
मेयरि छाल पर/औंदा जांदा कच्चा मार जँदन।

कभि जब म्यरा फूल झड़ने
अथवा कुटमणै टुट गैने
अफचै उच्चा अर गच्च बण्याँ वृक्षु दगड़े
अफ तैं सुबरेक्यि-मि पिते छौं-निराशे छौं।
अफचै खज्याँ अर भुंच्यां भुगगुलौं देख्यी-
संत्वसे छौं- चरखुर लगदौ रयूँ!

मी पर घोल बण्याँ छन
बच्चा च्वींच्याँणा रँदन,
फिर्भि, मेयरो भि एक घोल छ
जैमा म्यरि नइ पौद सैंतेणी छ उठणी छ।
पर, मेयरि सांई दूर-दूर तैं पसरीं रँदन
जौंमा मेयरा फूल अदिखेण मू हैंसदन।

भैर आगास-लगुला मी पर लपटेणा, पळेणा रँदन
भिन्न ढोर पर खरेणी आग/दप्प-दप्प पिलचणी रौंद।

घोल

फुर्र-फुर्र उडैक्यि अयाँ हम
अयां यख चारो टिपणू छा
पर, यखा लम्बा लहरौं मा
यख, दूर-इथगा दूर
उडौणै रौड़ मा ब्यळमे गयां!
हम जु एकनासि छां
यका हैका देख्यी खुद्यां-मि छां
कभि समवेत स्वर मा बासि छां
यकजुम्मा नि ह्वै सकण लै फटग्वँसे छा!
मां कि खुच्लि परै लुराण
अर तिंदरौं का बण्यां घोल्वी सिंपाँण
हमन जबरि भि याद करे
अफसणि हीणो अर कमसल समझे!
छांच मँगणू जांद
परोठो लुकौणै आदत हमरि अज्यूं नि गै
अपणा बुजुर्गु तैं हम
नुमैसे चीज समझण मा पुलबैं मनदां!
आज हम हौर्वी तरो च्वींच्यांण बैठ गयां
देसु घोल बणैक्यि 'बसण' बैठ गयां
अर, हमरा यूँ घोलु मा छ्वप्यां प्वथ्लु
हौर भि लम्बा लहरौं मा
उडौणू उमलेयां छन

जनि हम उडै छा- फुर्र, फुर्र, फुर्र!

दैसत

बुग्याळा कोणा पर
जखम् बटि जंगळ शुरु होंद
जड्डौं का कुँगळा घाम मा पसर्‌यी
हिर्णि अपणा कस्तुर्‌या छौना तैं
दूदि नी पिलै सकणी
किलै कि
ये इतरा-सि बेळम मा
शिकारी वूँ पर धैड़ गोळि मार देलो!
बोण अपणामन्ते के अदेखा डाळा मा बणायाँ
घोल मा छोप बैठीं हिलाँस
अपणा अँडरु नी फोड़ सकणी
किलै कि
वूं बटि निकळ्याँ बच्चौं को च्वींच्याट सूण्यी
चिड़िमार वूँ पर फट्ट झपेटो मार देला।
ऐंच धर्ति मा ऐक्यि बीज
वृक्ष बणणू कुमनौणू छ
पर दैसतन
वेको कळेजो फट्‌यी दुफाड़ो ह्वेगे
किलै कि/वे पक्को पता छ
कि बड़ो ह्वेक्यि वेन
कुल्हाड़ौंन गिंडायेण!
सुँगर्‌वी तरों लोग
पाणि मा कूड़ा कचरा छिमनौणा छन
बिचारो पाणि अपणा मुंड मा
कबतैं गू-मूत प्वंण द्यौ
कबतैं तन बदन पर सड्‌याँण लपोड़ो
याँन, परेसान अपणि ज्वान बचौणू
गदरौं वो हौर ग्हैरा-ग्हैरा
धरत्या तौळ लुकणू जाणू छ।

सांसद विधायक बणण वळा
पार्ट्यों का खूनि अपराधी कंडिडेट
पिस्तौल-छुर्रा-वळा संड मुसण्डौं ल्हेक्यि
गौं-गौं मा घुमणा छन
कि, भोट देणू चल्दा छा कि ना!
पण वख फुंडो त क्वी छई नी छ
बस्त्यौं मा घुमदारा जँगळ्यौं कि डौरौ
लोग जंगळु जैक्यि छन दुबक्याँ।

4.7 अभ्यास प्रश्न

1. **'पैतुळ्यों प्रणाम' किस कविता में कहा गया है?**
2. **'बाछी बुरकण दे' किस कविता में आया है?**
3. **स्वयं को लेखक ने चल्दा फिरदा वृक्ष किस कविता में माना है?**
4. **घोल से कवि का क्या आशय है?**
5. **हिरणी अपने बच्चे को क्या नहीं कर पा रही है?**

4.7 सारांश

जन्म भूमि- महाकवि अबोधबन्धु बहुगुणा द्वारा रचित कविता जन्मभूमि अपनी मातृभूमि की वन्दना है। कवि मातृभूमि की चरण वन्दना करते हुए कहते हैं कि तू हमारे हृदय को आनन्दित करती है। तेरी शस्यश्यामला धरा में जब भोर का उजाला होता है तब दृश्य मनोहारी होता है। तेरी ममतामयी गोदी में पशु-पक्षी, वनस्पति सब स्वछन्दतापूर्वक खेलते हैं। तूने सभी को आसरा दिया है। अपरिमित स्नेह व आशीष प्रदान किया है। हे मातृभूमि! तेरे इसी वात्सल्य को शत-शत नमन है।

शैलोदय- अपनी धरती के उत्तुंग शिखरों से विनम्र आग्रह है कि तुम्हारी हिमाच्छादित चोटियों से आने वाले प्रकाश से हमारी घाटियाँ दीप्त हो जाएँ। शैलोदय का प्रकाश सुख-समृद्धि को साथ लिए आए। धरा का सम्पूर्ण अन्धकार मिटाए। मनुष्य की निराशा को दूर करने व उसमें नई आशा व ऊर्जा का संचार करने की कामना की गई है। धरती पर जो वनस्पतियाँ सुप्तावस्था में हैं, उन्हें भी जागृत करो। जलस्रोत फूटने दो, बांसुरी की सुर लहरी बिखरने दो, गाय की प्यारी दुधमुंही बछड़ियों को कुलांचे भरने दो। जो मनुष्य दुविधा में हैं उनका मार्गदर्शन कर पथ प्रशस्त करो, उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागृत करो। हे शैलोदय! तुम्हारा अभिनन्दन है।

मनखी- कवि इस कविता में आत्मकथा प्रस्तुत करता है। वह स्वयं को एक वृक्ष मानता है। चलता-फिरता वृक्ष। वह कहता है कि मुझे अन्न से खाद-खुराक मिलती है। मेरी जड़ों को प्रातःकाल गर्मागर्म चाय से ही पोषण मिलता है। मेरे पत्तों पर प्रातःकाल की धूप चमकती है। वर्षा मेरे पत्रदलों पर तरपर गिरती है। मौसम की गर्म-सर्द मार मुझ पर पड़ती है। मैं सभी मौसमों से संघर्ष करता हूँ। किन्तु दुख विपत्ति के कारण जब मेरे फूल झड़ते हैं कलियाँ मुरझाती हैं तो मैं अपने से ऊँचे हरे-भरे वृक्षों से अपनी तुलना करता हूँ। तब निराशा से भरता हूँ किन्तु जब खुद से बदहाल वृक्षों को देखता हूँ तो मेरा संताप कम होता है। पुनः सन्तोष होता है कि मुझसे अधिक दुख विपत्ति झेलने वाले भी हैं इस धरा में। पक्षियों ने मुझ में घोंसले बनाए हैं। चिड़ियों के बच्चों की चहचहाहट होती है। मेरा अपना भी घोंसला है जिसमें मेरी नई पीढ़ी पल रही है। संतति विकसित हो रही है। कुछ परजीवी लताएँ भी मुझ पर लिपटी हैं। पोषण कर रही हैं। भीतर खोखले भागों में आग धधकती है। कवि ने स्वयं को वृक्ष का प्रतीक बनाकर अपने अनन्त संघर्ष, सुख-दुख का वर्णन किया है।

घोल- अपनी पैतृक भूमि को छोड़कर शहरों में पलायन कर चुके लोगों की कहानी व्यक्त करती है 'घोल' कविता। स्वयं को एक पंछी बताते हुए कवि सभी प्रवासियों को एक चिड़िया की संज्ञा देते हैं। वह कहते हैं कि हम सुदूर क्षेत्र से उड़कर आये हैं। यहाँ शहरों में अपने आशियाने बनाये हैं जिन्हें वे 'घोल' घोंसला कहते हैं। वे स्वयं को अपने स्वजनों की याद में व्याकुल पाते हैं। वे यह भी कहते हैं कि हमने अपने पैतृक स्थानों को शहरों के आशियानों से हमेशा कमतर व तुच्छ समझा, जो कि गलत था। हम इन आशियानों में और ही भाषा में बतियाते हैं। हम जब यहाँ इन घोंसलों में जा बसे तो हमारी संतति तो इन्हें भी छोड़कर कहीं और बहुत दूर उड़ने को उत्साहित है जैसे कभी हम हुए थे।

दैसत- यह नई धारा की आधुनिक कविता है। एक शान्तिप्रिय दुनिया बाहरी अतिक्रमण व आक्रान्ताओं से मानो दुखित व दहशतजदा दिखाई देती है। कविता पहाड़ के अस्तित्व पर आये संकट को महसूसती है। जब प्रकृति यह कहती है कि जाड़ों की गुनगुनी धूप में कोई हिरनी अपने मृग को दूध नहीं पिला पा रही है क्योंकि वह संशकित है कि कहीं इस बेला में कोई शिकारी हमें गोली से न उड़ा दे। पंछी अपने अण्डों से बच्चों को जन्म नहीं दे पा रहे हैं कि कहीं बच्चों की चहचहाहट सुनकर कोई चिड़िमार उन्हें मार न दे। एक बीज अंकुरित होने से डर रहा है कि बड़ा होकर कोई कुल्हाड़ी उन्हें काटेगी। पानी भी उन शूकर प्रकृति के लोगों से त्रस्त है कि जो उसे प्रदूषित कर रहे हैं। कुल मिलाकर यह प्रकृति की पुकार है जो हमें सचेत करने के लिए आह्वान कर रही है।

4.8 शब्दार्थ

जन्मभूमि- हिवांळ- हिमालय, पैंतुळ्यूं- चरणों में, परणि उलारिणी- हृदय को आह्लादित करने वाली, उघाड़दी किवाड़- खोलती है दरवाजे, उद्यो- उजाला, बाछी- बछिया, खल्याण- आंगन, रुम्क- शाम, राम्हणी- रम्भाती, क्वदड़ि सार- मड़वे के खेत, ह्यूचुळों- हिमाच्छादित पर्वत।

शैलोदय- धै- आह्वान, पितीं- परेशान, स्याणी- सपने, उफरण- खिलना, बिजालना- जागृत करना, चचलाट- हलचल, खितखण- उन्मुक्त हँसी, बाछी बुरकण- बछिया का कुलांचे भरना, अदगद- दुविधा, घोल- घोसला, टिपणु- बीनना, रौड़- चाहत, एकनसि- एक समान, खुद्यां- याद में व्याकुल, फटग्वसें- निराशा में, खुचलि- गोद, लुराण- दूध की गंध, सिपाण- सिलाप की गंध, कमसल- कमतर, परोठो- दूध, दही आदि रखने का लकड़ी का बर्तन, पुलबै- प्रशंसा, च्वींच्याट- चहचहाहट, प्वथळु- चिड़िया, उमलेणु- उत्साहित होना।

मनखी- मनुष्य, ब्यखुनि-सुबेर- शाम-सुबह, चलकद- चमकता है, द्वफरा- दोपहर, छै ढळकदन- धूप का ढलना, हलंकरि हलोळणी रंदन- आग की भीषण तपन झुलसाती रहती है, सिरें- ठण्डी बर्फीली हवा, बत्वणि- अंधड तूफान, असंदेक्यि- परेशान होकर, फौंटा- शाखायें, कच्चा- घाव का निशान, कुटमणा- फूटे हुए अंकुर, कोपलें, सुबरेकि- तुलना करके, संत्वसे- संतोश हुआ, पिलयणी रौंद- सुलगती रहती है।

दैषत- दहशत, कुंगळा घाम- गुनगुनी धूप, हिर्णि- मादा हिरण, छौना- मृगछौना (मृग का बच्चा), कुमनौणू- कसमसाना, छिमनौणा छन- बिखेर रहे हैं, सड्यांण- दुर्गन्ध, लपोड़ो- पोतना।

कवि पर आधारित अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 15 जून, 1927, 2. नागपुर वि०वि० से 3. भुम्याळ, 4. भुगत्यूं भविष्य

रचनाओं पर आधारित अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. जन्मभूमि कविता में , 2 शैलोदय में, 3. मनखी में , 4. घोल से आशय है अशियाना 5. दूध नहीं पिला पा रही है।

4.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शैलवाणी- अबोधबंधु बहुगुणा
2. गंग्वाळ- अबोधबंधु बहुगुणा
3. घोल- अबोधबंधु बहुगुणा
4. शैलोदय- अबोधबंधु बहुगुणा
5. चिट्ठी विशेषांक

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अबोधबन्धु बहुगुणा के कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
2. शैलोदय कविता में कवि क्या चाहता है? विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।

इकाई- 5

कन्हैयालाल डंडरियाल- 'उल्यरि जिकुड़ि', 'कीड़ु कि ब्वे'

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 कवि परिचय

5.4 अभ्यास प्रश्न

5.5 उल्यरि जिकुड़ि, कीड़ु ब्वे

5.6 अभ्यास प्रश्न

5.7 सारांश

5.8 शब्दार्थ

5.9 संदर्भ ग्रन्थ

5.10 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

'उल्यरि जिकुड़ि' गढ़वाली भाषा के महाकवि कन्हैयालाल डंडरियाल जी द्वारा रचित एक कालजयी गीत है। यह गीत महाकवि कन्हैयालाल डंडरियाल जी के 'अंज्वाळ' संग्रह से लिया गया है। इस गीत में प्रवास में रह रहे एक पहाड़ी व्यक्ति के अपने पहाड़ के प्रति लगाव को दिखाया गया है। वह प्रवास में अपने पहाड़ को याद कर रहा है तथा सभी को अपने मन की बात बता रहा है कि मैं कौन हूँ? हमारी पहचान क्या है? इन्हीं सब प्रश्नों का जबाब है यह गीत। देश दुनिया में कहीं भी रहने वाला गढ़वाली अपना परिचय इस गीत के रूप में दे सकता है। इससे बेहतर परिचय कुछ हो ही नहीं सकता। 'दादु' मतलब बड़े भाई को सम्बोधित करके यह गीत लिखा गया है। यह किसी एक व्यक्ति विशेष को सम्बोधित करके नहीं लिखा गया है बल्कि यह एक सामूहिक सम्बोधन है।

यह गीत एक लोक का परिचय देता गीत है। जिसमें प्रकृति व लोक संस्कृति से स्वयं को इस प्रकार से जोड़ा गया है कि एक दूसरे से लगाव के बिना एक दूसरे का कोई अस्तित्व ही नहीं है। अपनी माटी व थाती से स्वयं को जोड़कर अपना परिचय दुनिया को दिया जा रहा है। इस गीत में उसकी 'खुद' भी परिलक्षित हो रही है। उसका पहाड़ दिन-रात उसके मन मस्तिष्क में धड़कता रहता है और वह कहता है 'दादू! मैं पर्वतों का वासी हूँ।'

'कीड़ु कि ब्वे' पहाड़ी नारी की गहरी संवेदना, उसकी कथा-व्यथा का यथार्थ चित्रण करती हुई यह गढ़वाली की प्रतिनिधि रचना मानी जाती है। एक संघर्षशील वृद्धा की करुण कहानी जो पहाड़ी गाँव में अकेली छूटी हुई है। जिसका एक मात्र सहारा उसका पुत्र शहर का होकर रह गया है किन्तु जीवन के अन्तिम क्षणों में भी वह अपनी जन्मदात्री के दर्शन करने में लाचार है। यह सब नियति का खेल है। यह पहाड़ के घर-घर की कहानी है। ऐसी कीड़ु की ब्वे प्रायः सबके घर में है तथा ऐसा कीड़ु भी। आजादी के पश्चात् जिस तरह पहाड़ का युवा रोजगार की तलाश में शहरों की ओर गया फिर वहीं का होकर रह गया। उनके घरवाले सदा उनकी बाट जोहते रहे। किन्तु उन्हें सदा निराशा ही हाथ लगी। उसकी यह निराशा और पीड़ा बहुत से प्रश्न खड़े करती है। पर शायद ही यहाँ के नीति नियन्ताओं के पास उनका जबाब हो। देशकाल वातावरण के अनुरूप रची गई यह यथार्थवादी रचना एक ओर मानवीय सम्बन्धों की पड़ताल करती हुई नजर आती है वहीं दूसरी ओर बाजारवाद और भौतिकवाद की छाया में मानवीय मूल्यों के ह्रास की प्रत्यक्षदर्शी भी है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :-

- साहित्य की गीत विधा को समझ पायेंगे।
- एक प्रवासी के मन में पहाड़ के प्रति उमड़े प्यार को समझेंगे।
- प्रवास में रहकर भी एक पहाड़ी मानव के अपने पहाड़, प्रकृति से लगाव को समझ पायेंगे।
- गढ़वाली भाषा की शब्द सम्पदा से परिचित होंगे।
- पलायन के पश्चात् पहाड़ में अकेले छूटे बुजुर्गों की पीड़ा जान पायेंगे।
- अपने बेटे के वियोग का दुख व उसके लौट आने की आशा महसूस कर पायेंगे।

5.3 कवि परिचय

कन्हैयालाल डंडरियाल जी का जन्म 11 नवम्बर, 1933 में ग्राम नैलीं, पट्टी मवालस्यूँ, जिला पौड़ी गढ़वाल में हुआ। आपने कक्षा 8 तक ही स्कूली शिक्षा ग्रहण की थी। जब आप मात्र 16 साल के थे तो आपकी माता जी का देहान्त हो गया था। परिवार की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण आप रोजी-रोटी की तलाश में दिल्ली आ गये तथा एक मिल में मजदूरी करने लगे। 1982 में मिल बन्द हो गई फिर आपने घर-घर जाकर चायपत्ती बेची। आप बहुत ही सहज व सरल इंसान थे।

प्रकाशित साहित्य- 1. मंगतू (खण्डकाव्य) 1960, 2. अंज्वाळ (कविता संग्रह) 1978, 3. कुयेड़ी (गीत संग्रह) 1990, 4. नागरजा (महाकाव्य भाग-1) 1993, 5. चाँठौं का घ्वीड़ (यात्रा वृत्तांत) 1998, 6. नागरजा (महाकाव्य भाग-2) 1999, 7. नागरजा (महाकाव्य भाग-3-4), 8. रुद्री

(उपन्यास-2018), 9. बागि उपन्नै लड़ै (खण्ड काव्य) 2021, 10. कंसानुक्रम, स्वयंवर, भ्वींचल, अबेर च अंधेर नी स्वर्गलोक मा कवि सम्मेलन- नाटक;

पुरस्कार व सम्मान-1. गढ़भारती पुरस्कार- 1972, 2. पं० टीकाराम गौड़ सम्मान- 1984, 3. डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल पुरस्कार- 1990 (उ0प्र0 सरकार द्वारा), 4. पं० आदित्यराम नवानी पुरस्कार- 1991, 5. गढ़रत्न सम्मान 1998, 6. जयश्री सम्मान, 7. उत्तराखण्ड गौरव सम्मान- 2001, 02 जून 2004 को आपका दिल्ली में निधन हो गया।

5.4 जीवनी के आधार पर अभ्यास प्रश्न

1. कन्हैयालाल डंडरियाल जी का जन्म कब हुआ?
2. कन्हैयालाल डंडरियाल जी के प्रथम खण्डकाव्य का नाम क्या है?
3. कन्हैयालाल डंडरियाल जी द्वारा रचित महाकाव्य का नाम बताइए।
4. कन्हैयालाल डंडरियाल जी को डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल सम्मान कब मिला?

5.5 कविताएँ

उल्यरि जिकुड़ी

दादु मेरि उल्यरि जिकुड़ी
दादु मैं परबतू को वासी।
दादु मेरू सौंजड़्या च कफ्फू
दादु मेरि गैल्या चा हिलाँसी।। झम

दादु छौं नागिण्यूँ संगत्या
अटगु मि घ्वीड़ु का दगड़ा।
दादु रौं रौंत्यळा बणू मा
खेलु मि गंगा का बगड़ा।। झम

छायो मि बा जि को पियारो
छायो मि माँ जि को लाड़ुलो।
छौ म्यारा गौळि को हंसूलो
दादु रै बौ जि को भिंटूलो।। झम

भोरि मिन अदमिरी अँज्वळि

पेइ चा छु बडुल्यूँ को पाणी।
दादु ल्है अधितु छमोटो
रै ग्यऊँ तुड़तुड़ी मंगारी।। झम

दादु मिन राँसुळयूँ क बीच
बैठि कै बाँसुळी बजै ने।
दादु मिन चैढ़ि कै चुळखयूँ
चलकदी ह्युँचुळी द्यखीने।। झम

दादु वो रूड़ि का कौथिग
स्यूँद सी सैण मा कि कूल।
दादु वो सैञ्जड़यौं कि टोल
ह्ववै गये तीमला को फूल।। झम

देखि मिन म्वार्यूँ को रुणाट
दादु रै कौथिगू का थाळ।
दादु रै पोतळी द्यखीने
ल्हेन्द मिन रेशमी रुमाल।। झम

देखि मिन कौथिगुम् हिरणी
आँख्यूँ माँ बन्दुक्यों नचाँदी।
देखि मिन तीतरु की जोड़ी
दादु रै सुलकरी बजाँदी।। झम

देखि मिन बिंदि, चूड़ि, फूंदा
दादु रै गाँज्यल्यूं खुज्यांदा।
देखि मिन भ्यूँळ की स्वटगी
अल्वकाँ बोड्डु थैं बखौंदा।। झम

दादु रै उदमत्याँ चकोरुल
खालि कै नारंग्यूँ की डाळी।
दादु रै फगण्वटीं का ढांगा

लागिने लिम्मों की अंदाळी।। झम

दादु रै रीठऽ का बियों ला
स्वाति का बूँद सी द्वळीने।
भेटि चुट साँकि फर दिलम्
सैजि छा प्राणु मा रिटीने।। झम

पिसदि क्या च धौं कुजणी
ढैंचुड़ी बिंसरिम् जंदरी।
भूकळा नौनऊँ बुथ्याणी
रै ग्यये रातिऊँ ग्वथनी।। झम

छ्वारौं मां ऊळऽ की जिलकी
दादु रै चिट्ठि छै लिखाणीं।
समळि कि के थई हिंस्वळी
दादु छै आँसु टळपळाणी।। झम

रूंदी मिन दै कि ठेकि देखी
दादु रै पर्या का अगाड़ी।
जोड़ि हत हारि गै बिराली
हैंसि नि पटब्वड़ै किवाड़ी।। झम

ल्हाँदि मिन पाणि की कस्यरी
दादु रै घींडुड़ी घखीने।
सारिऊँ दाथुड़ी प्ळ्याँदी
दादु रै घूघुती द्यखीने।। झम

लाँद मिन बांज का गिंडका
दादु रै मल्येऊ द्यखीने।
दादु ल्हे रैफली हथू माँ
जाँद मिन भरतुला द्यखीने।। झम

देखि मिन ह्यूंद की कुरैं माँ
दादु रै कौंपदी कुळई।
देखि मिन मौळयरी बथौं माँ
दादु रै कुटमुणी उळिई।। झम

दादु रै भुइयाँ कापुळू की
दाण्यूँ ला तीमला लुकैना।
द्यखदा रैं रंगत्यळा दिवार
बौगाँ सी लळचई आख्यूँ ला।। झम

दादु रै उडमिला बुराँसुल
लुछिने भौरुं की जिकुड़ी।
दादु रै किन्वड़यूँ क बीचा।
द्यखिने हैसंदी फ्यूंल्वड़ी।। झम

देखि मिल चैत्वळी बयार।
दादु रै आँदर्यूँ कि डार।
देखि मिल पींगळी चदरी।
दादु रै सुलगदा अंगार।। झम

झुमकि सी तुड़तुड़ी मंगरी।
मखमली हैरि सी अंगड़ी।
फील्वर्यो हलकदी धौंप्यली।
घंघुटि सी लौंकदी कुयड़ी।। झम

गादर्यूँ चंदि की ठंगरी।
घमझळी सूनऽ को मुकुट।
राति की काळि सी कमळी।
चमकदा द्यू वला रतन।। झम

दादु रै प्रेम की तिसळी।
जिकुड़ि ल्हे चोळि डांडु रीटा।

बिसरू तौं रतन्यळी आख्यूँ का।
दादु रै मोति मिन नि टीपा।। झम

कीड़ु कि ब्वे

पोरू साल
ये बसग्याळ
आजै ब्याळि
रकर्याणी छै
ह्यरां! द कीड़ु कि ब्वे।

भूख अर नाँग
मळसा कि माँग
काळि कुयेड़ी
तींदि गतुड़ि
भिंजी/रूझीं
कुछ बरखल
कुछ आँसुल
आँदि फजलै ब्यखुनि
ह्यरां! द कीड़ु कि ब्वे।
धुरपळि पंद्यरि पाँड
क्वलणौ छ्वाया
उबर कमळौ कत्तर
पट तिखंडा भितर
यखुल्या- यखुलि
बयाणी रैंदि छै
ह्यरां!द कीड़ु कि ब्वे।

डोर्‌यूँ कि झिंजकी
भाँडौं का खपटण
ढकीण डिसाण अंदड़ा
द्वी-चार झुल्लौं की ल्वतगी
अर भितर फुंड

बक्कि बातै
हडगौं कि थुपड़ि
ह्यरां! द कीड़ु कि ब्वे।

उनि झैड़
उनि तींदु खैड़
चस्स ऐड़ो
टुट्यूं दैड़ो
एक कूणि फर
जडडल खुगटाणी
रूणीं रैंदि छै
ह्यरां! द कीड़ु कि ब्वे।

पोस्टमैन भैजिम्
यकनात के चलि जाँदि छै
आँदा-जाँदौ मा पुछदि छै
लुखरा देखी प्राण सस्याँदि छै
ह्यरां! द कबि म्यारु बि.....
ब्वारि ल्हे कि.....
खुचिलि फर एकाध.....
इनि गाणी गाँठा गठ्याँदि छै
ह्यरां! द कीड़ु कि ब्वे।

दिल्लि का बीच
कीड़ु कृपाल सिंह च
ब्वारि बि चीज प्वड़ीं च
निपल्टु समझा
लोक ब्वदीं
मिल बि सूण
गगळाँदि बाच
कीड़ु.....कीड़ु .....
धै लगाँद

वे खंद्वार
बिचरि भल्लि आदमीण छै
ह्यरां! द कीड़ु कि ब्वे!

5.6 अभ्यास प्रश्न

1. कविता में आये दो पक्षियों के नाम बताइए।
2. कवि अपने को कहाँ का निवासी बताता है?
3. कवि ने रैसुंल्यूं के बीच क्या किया?
4. कीड़ू की ब्वे के कवि कौन हैं?
5. कीड़ू कि ब्वे रचना किस विमर्श की रचना है

5.7 सारांश

उल्यरि जिकुड़ी- देश दुनिया को अपना परिचय देते हुए एक गढ़वाली व्यक्ति कह रहा है कि 'दादू! मैं पर्वतों का वासी हूँ। मेरा हृदय बहुत उदार है। मेरा व्यक्तित्व बहुत सीधा व सरल है। कफ्फू जैसी शर्मीली व हिलांस जैसी मधुर कण्ठ वाली बालाओं से मेरी मित्रता है। मैंने घुरड़-काकड़ जैसे उछलकूद व अठखेलियाँ करने वाले बाल सखाओं के संग पहाड़ों में घने जंगलों को दौड़कर पार किया है।

दादू! मैंने अपनी भाभियों की लम्बी-लम्बी चोटियों (धयेली) को हँसुळि जैसे गले में धारण किया है। मैंने अंजुरी में जल कुंडों से थोड़ा-थोड़ा पानी लेकर अपनी प्यास बुझाने की कोशिश की है।

दादू! मैंने रौंसुळ (देवदार प्रजाति का वृक्ष) के घने वनों के बीच बैठकर बांसुरी बजायी है और ऊँचे पर्वत चोटियों पर चढ़कर चमकते हिम शिखरों को देखा है।

दादू! वो गर्मियों में जगह-जगह होने वाले मेले, वो सखाओं की मेला देखने जाती टोलियाँ मेरे लिए इस प्रदेश में 'तिमला फूल' (जो कभी दिखता ही नहीं) हो गये हैं। मैंने उन मेलों में उन नव विवाहित बेटियों को देखा है जो अपने मायके वालों से मिलकर मधुमक्खी की तरह गुनगुन करते हुए अपनी पीड़ा व खुद बांटती हैं तो उन तरुण बालाओं केा भी देखा है जो तितलियों की तरह इधर-उधर उल्लास व उमंग में मंडराते अपने लिए रेशमी रुमाल खरीदती रहती थी। मैंने तीतरों की जोड़ी' अर्थात नव विवाहित युगलों को उल्लास व उमंग में प्रेम का इजहार करते देखा है।

गीतकार कहता है कि दादू! मैंने नई नवेली दुल्हनों को देखा है। मैंने शरारती बच्चों (उदमत्यां चकोर) को नारंगी के पेड़ों को खाली करते देखा है। मैंने उन रसिक प्रौढ़ों को भी देखा है जो कुछ खट्टी मीठी बातों के लालच में आज भी महिलाओं के आगे-पीछे मंडराते रहते हैं।

दादू! मैंने उन छोटी गुटमुटी फुर्तीली महिलाओं को जंदरी (आटा चक्की) को घुमाते देखा है, छोटे-छोटे बच्चों का लालन-पालन करते देखा है, अपने प्रदेश गए पतियों के लिए किसी के पास पत्र लिखाते देखा है। उन्हें परदेशियों की याद में आंसू बहाते देखा है।

दादू! मैंने घिंडुड़ि-घुघुति रूपीं मेहनतकश उन माँ-बहनों को देखा है जो रात-दिन एक करके पहाड़ों में खेतों को आबाद करती है। मैने भर्तुला के रूप में उन फौजी भाइयों को भी देखा है जिनकी वीरता के किस्से सारा संसार सुनता और सुनाता है जो देश रक्षा हेतु सदैव तत्पर रहते हैं। अपनी जान भी हँसते-हँसते दे देते हैं। दादू! मैंने चीड़ रूपी उन बुजुर्गों को देखा है जो जाड़े से बहुत डरते हैं व हर समय आग तापते रहते हैं।

दादू! मेरे मुलुक में पानी की धाराएँ ऐसी बहती रहती हैं जैसे कानों में झुमकियां लटकी रहती हैं। शस्यश्यामला धरती ऐसी लगती है जैसे किसी ने हरी अंगड़ी पहन ली हो। ढलते सूरज की रोशनी पहाड़ों की चोटियों में ऐसे लगती है जैसे धरती माता ने सिर पर सोने का मुकुट धारण किया हो। रात इतनी अंधेरी काली लगती है जैसे किसी ने काला कम्बल ओढ़ा दिया हो। परदेशी गढ़वाली और पपीहे में कोई अन्तर नहीं है। हमारे अन्तर्मन में पहाड़ की खुद की प्यास हमेशा बलवती रहती है।

'कीडु कि ब्वे' एक पहाड़ी वृद्धा की करुण कहानी व पलायन की मार झेलती हुई माँ के बयान दर्ज करती है यह कविता। महाकवि कन्हैयालाल डंडरियाल की स्त्री विमर्श की रचनाओं में यह एक श्रेष्ठ रचना है जो एक ओर पहाड़ का यथार्थ दिखाती है तो वहीं दूसरी ओर व्यवस्था की पोल भी खोलती है। एक असहाय बूढ़ी माँ अपने बेटे के आने की आस में ही रहती है जिसकी स्थिति बहुत दयनीय है। उसकी कारुणिक स्थिति का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि पिछले वर्ष बरसात में इन्हीं दिनों इधर-उधर भटक रही थी। हे राम! कीडु की माँ, खेतों में भूखी-प्यासी, निराई-गुड़ाई करती कुहरे के बीच, भीगते हुए चीथड़े कुछ वर्षा से कुछ आँसुओं से, देर शाम घर लौटती वह कीडु की माँ!

मकान बुरी तरह से क्षतिग्रस्त, धारों के समान अन्दर बहता पानी, जिसके पास ओढ़ने-बिछाने को मात्र एक कम्बल का टुकड़ा है। अकेली जूझती वह हे राम! कीडु की माँ। कमरे में टूटे फूटे बिखरे बर्तन, फटे-पुराने कुछ चीथड़े, हड्डियों की एक छोटी ढेरी सी है हे राम! कीडु की माँ।

सर्दि में, बिना बिस्तर, भीगे घास-फूस पर एक कोने में जाड़े से ठिठुरती रहती बेचारी कीडु की माँ! जब कभी डाकिया आता तो इस आस में कि क्या पता उसके बेटे कीडु की कोई चिट्ठी आई हो, वह सरपट दौड़ी जाती और पूछती कि क्या मेरे बेटे की कोई कुशल क्षेम? जब किसी महिला की गोद में कोई दुधमुहाँ शिशु देखती तो कल्पना करती कि हे राम! कभी मेरा पोता भी होगा ऐसे। किन्तु इन सभी बातों से बेखबर उसका बेटा कीडु दिल्ली में रहकर अब कृपाल सिंह

कहलाता है, बहु भी अति आधुनिक है। वे कभी लौटकर नहीं आने वाले। लोग कहते हैं, हाँ हमने भी सुना वह कराहती लड़खड़ाती आवाज उस खंडहर के अन्दर, अपने बेटे को पुकारती, बहुत सरल व नेक औरत थी वह, हे राम! कीड़ु की माँ।

5.8 शब्दार्थ

उल्यरि- उल्लास भरा, जिकुड़ि- हृदय, सौंजड़्यां- हमउम्र, मित्र, गैल्या- दोस्त, घ्वीड़- हिरन, रौंत्याळा- सुन्दर, अदामिरी- आधी, अधीतो- अतृप्त, चुलख्यूं- चोटियों, ह्यूंचुळी- हिमाच्छादित, कौथिग- मेला, सुलकरी- सीटी, ढांगा- बूढ़े बैल, उद्मत्या- उन्माद, समळी- याद करके, टकपथणी- ऑसू डँबडबाना, ह्यूंद- शीत ऋतु, फ्यूलड़ी- फ्योंली का फूल, रतन्यळी- रतन के समान सुन्दर। पोरु- पिछले वर्ष, बसग्याळ- वर्षा ऋतु, ब्याळि- कल (बीता हुआ), रकर्याणी- बेचैनी से इधर-उधर घूमती, मळसा- एक खरपतवार, कुयेड़ी- कोहरा, तींदी- भीगी हुई, गतुड़ी- वस्त्र, फजल- सुबह, धुरपाळ- पहाड़ी घरों की पठाल वाली दो ढालदार छतों का मिलान, जो मिट्टी एवं पत्थरों से गुंथा होता है। पंद्यरि- धारा, पाँड- अन्दर वाला कमरा, छोया- बरसात में फूटने वाले जल स्रोत, उबर- मकान के भूतल का कमरा, भाँडा- बर्तन, ल्वतगी- चमड़ी।

रचनाकार की जीवनी पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. 11 नवम्बर, 1933, 2 मंगतू, 3. नागरजा, 4. 1990

रचना पर आधारित अभ्यास प्रश्नों के उत्तर 1. कफ्फू हिलांस , 2. पर्वत निवासी, 3. बाँसुरी बजाई, 4. महाकवि कन्हैयालाल डंडरियाल, 5. स्त्री विमर्श की रचना

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. अँज्वाळ- कन्हैयालाल डंडरियाल
2. 'चिट्ठी पत्री' पत्रिका

5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. कवि ने विविध पक्षियों को विविध अर्थों में प्रयोग किया। इस कथन की विवेचना कीजिए।
2. इस गीत में प्रस्तुत प्राकृतिक उपमाओं की व्याख्या कीजिए।

इकाई- 6

नरेन्द्र सिंह नेगी- घाम, बसन्त ऐगे, कख देखी होली, इ्यूँतु तेरि जमादरी, धरति कि बिपदा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 कवि परिचय

6.4 चयनित गीत

6.5 सारांश

6.6 शब्दार्थ

6.7 अभ्यास प्रश्न

6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.9 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

गीत साहित्य की एक सशक्त विधा है। गीत के जैसी सर्वग्राह्यता और सम्प्रेषणीयता शायद ही किसी विधा में हो। गीत साहित्य के प्राण तत्व हैं। जहाँ तक गढ़वाली गीतों की बात है तो बिना गढ़वाली गीत सुने व समझे कोई गढ़वाल की आत्मा को नहीं जान सकता और उस पर नरेन्द्र सिंह नेगी के गीत हों तो कहना ही क्या। उनके गीतों में पहाड़ धड़कता है। पहाड़ का जनजीवन झलकता है या यूं कहें कि उनके गीतों में सम्पूर्ण पहाड़ रचा बसा है। उत्तराखण्ड का शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसने नरेन्द्र सिंह नेगी जी के गीत न गुनगुनायें हों। शायद ही कोई ऐसा मस्तिष्क हो जिसे उनके गीतों ने उद्वेलित न किया हो। शायद ही कोई ऐसा हृदय हो जो प्रफुल्लित न हुआ हो। उनके गीतों में समाज की गहरी संवेदनाएँ हैं जो मनोमस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ती हैं। इसी कारण वे उत्तराखण्ड के सर्वाधिक लोकप्रिय संस्कृतिकर्मी हैं जिन्होंने पहाड़ की विशेषता, विवशता, विकलता व विडम्बना हर पक्ष को स्वर दिया है। प्रयोगशीलता उनकी रचनाधर्मिता का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। उनके गीतों में वैराट्य, वैविध्य, व वैशिष्ट्य है। सौंदर्यानुभूति व संघर्षगाथा है। ये सभी गुण व विशेषताएँ उनके इन चयनित गीतों में भी देखी जा सकती हैं। घाम गीत में पहाड़ों पर सुबह धूप के आने से लेकर शाम को ढलने तक का अर्थात् सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक का सजीव चित्रण है। कख देखी होली एक श्रृंगारिक गीत है जो कि अपनी माटी के

बिम्बों व प्रतीकों से सजा हुआ है। जिसमें उपमा की गहरी रसानुभूति है। धरति कि विपदा एक अत्यन्त कारुणिक मर्मस्पर्शी रचना है जिसमें कल्पना से बढ़कर यथार्थ अभिव्यक्त होता है। 'झ्यूंतू तेरी जमादरी' सर्वहारा वर्ग की सामूहिक संघर्षगाथा है। शोषण व दमन के खिलाफ पुरजोर प्रतिकार है। नरेन्द्र सिंह नेगी के सभी गीतों की भांति इन गीतों में भी सुगढ़ शिल्प, उत्कृष्ट भाव अभिव्यंजना, काव्यशास्त्रीय चमत्कार एवं अनूठा काव्य सौंदर्य है। इसलिए इन्हें जितना सुनना व गुनगुनाना आनन्दित करता है उसी तरह पढ़ व समझकर शायद कुछ मीमांसा भी कर पाएं।

6.2 उद्देश्य

- कालजयी रचनाकार नरेन्द्र सिंह नेगी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की एक झलक देख पायेंगे।
- चयनित गीतों में प्रयुक्त उत्कृष्ट शिल्प व काव्य सौन्दर्य पढ़ व समझ पायेंगे।
- गढ़वाली भाषा की शब्द सम्पदा के कुछ उदाहरण जान पायेंगे।
- गीत रचना के अद्भुत शिल्प से प्रेरित हो पायेंगे।
- गढ़वाली गीत साहित्य की समृद्धि व विशिष्टता जान पायेंगे।

6.3 कवि परिचय

गढ़रत्न नरेन्द्र सिंह नेगी का जन्म 12 अगस्त, सन् 1949 को पौड़ी गाँव पट्टी नान्दलस्यूं, पौड़ी गढ़वाल में श्रीमती समुद्रा देवी एवं श्री उमराव सिंह नेगी के घर हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव में हुई। आपका बाल्यकाल अति अभाव में बीता। अपनी नैसर्गिक प्रतिभा के बल पर आपने स्नातक की शिक्षा प्राप्त कर संगीत में प्रभाकर किया। आप गीत-संगीत की ओर लोकगीतों, गाँवों में, मेलों में गाए जाने वाले लोकगीत सुनकर प्रेरित हुए। आपने पहला गीत 'सैरा बसग्याळ बौण मा' सन् 1976 में रचा। यह पहाड़ी नारी के दुख-दर्द व संघर्षगाथा का गीत है। इस गीत के साथ शुरू हुआ आपका साहित्यिक-सांस्कृतिक सफर आज भी जारी है। आपकी इस यात्रा को पचास वर्ष पूरे होने वाले हैं। अपने साहित्य, संगीत व गायन की गहरी अभिव्यंजना व सौंदर्यानुभूति के कारण आप शुरू से आज तक उत्तराखण्ड के सर्वाधिक लोकप्रिय संस्कृतिकर्मी हैं। आपकी उत्कृष्ट रचनाधर्मिता को देखते हुए उत्तराखण्डी लोक ने आपको गढ़रत्न, गढ़शिरोमणि, गढ़ गौरव, लोकगायक आदि उपाधियों से विभूषित किया है। लोक की तरफ से ऐसा मान-सम्मान विरले कलाकारों को ही प्राप्त होता है। सन् 1968 में भाषा आन्दोलन में सक्रिय भागीदारी (सरकार की नजर में विद्रोह) करने के कारण 19 साल के नरेन्द्र 65 दिन सेण्ट्रल जेल बिजनौर में रहे।

आपके गायन की शुरूआत सन् 1978 में आकाशवाणी लखनऊ से हुई। तत्पश्चात् आप लखनऊ व आकाशवाणी नजीबाबाद से लगातार गा रहे हैं। आपका पहला ऑडियो कैसेट 'ढेबरा हर्चि

गेनी' सन् 1982 में रिलीज हुआ। तब से आपके लगभग पचास ऑडियो कैसेट व सीडी बाजार में आ चुके हैं।

आपने लगभग 2 दर्जन फिल्मों में गीत, संगीत व गायन किया है। आपने अपनी धरती व लोक के सुख-दुख को गहराई से महसूसा है। तभी आपकी रचनाओं में इस धरती का शायद ही कोई पक्ष व रंग छूटा हो। आपकी गीत यात्रा के अतिरिक्त आपने कविताएँ भी रची हैं जो पत्र-पत्रिकाओं व मंचों से प्रसारित होती रहती हैं। आप एक कुशल चित्रकार भी हैं। आपके व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थ भी प्रकाशित हुए हैं जिनमें 'अक्षत' (सम्पादकः गणेश खुगशाल 'गणी'), नरेन्द्र सिंह नेगी गीत यात्रा (उत्तराखण्डी लोक भाषा साहित्य मंच), नरेन्द्र सिंह नेगी के गीतों में जन सरोकार (हे०न०ग०विश्वविद्यालय) आदि प्रमुख हैं। आपके गीतों के हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में अनुवाद भी हुए हैं तथा बहुत से शोधार्थी शोध भी कर रहे हैं। आपकी अब तक चार पुस्तकें (गीत संग्रह) प्रकाशित हो चुके हैं- 1. खुचकण्डि 1991, 2009, 2. गाण्यूं की गंगा स्याण्यूं का समोदर 1999, 3. मुट्ट बोटीकि रख 2002, 2018, 4. तेरी खुद तेरो ख्याल 2010 हैं।

सम्मान/पुरस्कारः- 1. मोनाल सम्मान (लखनऊ भ्रातृमण्डल 1994), 2. गढ़गौरव सम्मान (गढ़वाल सभा चंडीगढ़ 1995), 3. हिमगिरि सम्मान (ओ.एन.जी.सी. देहरादून) 1997, 4. आकाशवाणी सम्मान लखनऊ 1998, 5. जयदीप सम्मान गोपेश्वर 1999, 6. शिवालिक रत्न सम्मान देहरादून 1999, 7. गढ़कला शिरोमणि सम्मान गढ़ कला सांस्कृतिक संस्थान पौड़ी 2000, 8. मोहन उप्रेती सम्मान अल्मोड़ा 2002, 9. मैती सम्मान नैनीसैंण चमोली 2010, 10. गढ़रत्न सम्मान गढ़वाल भ्रातृ मंडल मुम्बई, 11. संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार 2018 भारत सरकार प्रमुख हैं।

6.4 जीवनी पर आधारित प्रश्न

1. नरेन्द्र सिंह नेगी का जन्म कब और कहाँ हुआ?
2. उनका पहला गीत कौन-सा है?
3. उनकी पहली कैसेट का नाम क्या था?
4. नेगी जी के एक गीत संग्रह का नाम बताइए।
5. भाषा आन्दोलन में श्री नेगी जी जेल कब गए?

6.5 चयनित कविताएँ

घाम

चम्म चमकि घाम काँठ्यूँ मा
हिंवाळी कांठी चन्दिकि बणि गैनी
बणि गैनी- हिंवाळी काँठी चान्दि कि बणी गैनी।।

सिब का कैलासू गाई पैलि-पैलि घाम
सेवा लगाणू आई बदरी का धाम
सर्र फैलि घाम डांडों मा-
पौन-पंछि, डांडी, डाळि, बोटी बिजि गैनी। हिवांळी कांठी..॥

ठंडु मठु चढ़ी घाम फुलूकि पाख्यूं मा
लगि कुतगेळी तौंकि नांगि काख्यूंमा
खिच्च हैंसिनि फूल डाळ्यूंमा-
भौंरा पोतळा रंगमत बणी गैनी। हिवांळी कांठी...॥

डांडि कांठि बिजाळीकि पौंछि घाम गौंमा
सुनिन्द पोड़ीं छै बेटी-ब्वारी डेरौंमा
झम्म झौळ लगी आंख्यूंमा-
मायादार आंख्यूंका सुपिन्या उड़ी गैनी। हिंवाळी कांठी...॥

छुंयूं मा मिस्ये ग्येनी पंदेरोंमा पंदेनी
भांडि भोरै ग्येनी तौंकि छ्वीं नी पुरेनी
खळ्ळ खत्ये घाम मुखड्यूंमा-
पितळण्या मुखड़ी सूनै की बणि गैनी। हिवांळी कांठी...॥

दोफरामा लगी जब बणूमा घाम तैलू
बैठिग्येनि घस्येनी बिसैकि डाळा छैलू
गर्र निन्द पोड़ी छैलुमा-
आई पतरोळ अर घस्येनी लुछे ग्येनी। हिवांळी कांठी...॥

ब्यखुनि को स्वीलो घाम पैटण बैठिगे
डाँड्यूं का पिछाड़ी जून हैंसण बैठिगे
झम्म रात पोड़ि रौल्यूं मा
पौन-पंछि, डांडी, डाळि बोटी सेई गैनी।

बसन्त ऐगे

रुणुक-झुणुक रितु बसन्त गीत लगांद ऐगे
बसन्त ऐगे हपार डांडा सार्‌यूं मा।
ठुमुक-ठुमुक गुन्दक्यळी खुट्‌युन हिटीक ऐगे
बसन्त ऐगे लिपीं-पोतीं डिंड्याळ्यूँ मा।

बासन्ती दिन रात, मन्खी बसन्ती
भौंरा पोतळौं कि बरात पल्की बसन्ती
ग्यूं-जौ कि हैरी, सार्यूंन पैरी
लय्या का फूलू कि-टल्खी बसन्ती
रंगिलि पिंगळि टुपक्यळी टोपिली पैरि ऐगे
बसन्त ऐगे हपार फुल्वी डाळ्यूँ मा।

मुखड्यूँ मा हैंसणू च पिंगळू मौळ्यार
गलोड्यूँ मा सुलगैगि ललंगा अंगार
आँख्यूँ मा चूणान सुपिन्या बसन्ती
उलार्या जिकुड्यूं मा छळकेणू प्यार
सिणका सूत कुंगळि कंदुड़ि-नकुड्यूँ मा पैरेगे
रुणुक-झुणुक....।

हैरा-भैरा ह्वेग्येनी रुखा-नांगा डाळा
कु पैरेगे होलु तौं थैं फूलूकि माळा
बुग्याळू मा पसर्यूँ च घाम बसन्ती
खोल्येनि चखुल्यूंन उंठड्यूँ का ताळा
गुणमुण गुणमुण म्वार्यूँ दगिड़ि गुणमुणांद ऐगे
बसन्त ऐगे हपार सैदे जळोट्यूँ मा।
रुणुक-झुणुक....।

कख देखि होली

यखि ई पिरथी मा, ये हि जलम मा
देखि त छैंच, कख देखि होली
रुबसी बांद ज्वा बसीगे मन मा
देखि त छैंच, कख देखी होली-
सुपिन्यु ह्वे होलू कि बैम रै होलू।

चोरीं कखड़ि बिराणि सगोड़ि कि सी छै वा
सवादि यनि कि पैणे कि पकोड़ि सी छै वा
कांडों का बोटू मा हिंसरै गुन्द सी
पिंडाळु पातु मा ऊंसि कि बुन्द सी
कख देखी होली

सुपिन्यु ह्वे होलू.....।

दाना दिवाना कि ब्योवाकि गाणि सी छै वा
रुड़्यूं का घामू मा छोया को पाणि सी छै वा
बादळु बीच मा जूनी झलक्क सी
दाता का मुक्क मा मंगत्याकि टक्क सी
कख देखी होली
सुपिन्यु ह्वे होलू.....।

ह्यूंदि का दिनू मा घामै निवात्ति सी छै वा
बळा का मनै कि स्याणि दुद भात्ति सी छै वा
मरचण्या खाणा मा खीर जन मिट्ठि सी
दूर परदेसू मा घारै कि चिट्ठी सी
कख देखी होली
सुपिन्यु ह्वे होलू.....।

ब्यो बरात्यूँ मा स्याळ्यूँ कि गाळि सी छै वा
नाति नत्येणों पर दादी अंग्वाळि सी छै वा
भूका का अगाड़ी भोजनै थाळि सी
चौका तिराळी नारंगी डाळि सी
कख देखी होली
सुपिन्यु ह्वे होलू.....।

सूनैकि गौळि मा मोत्यूंकि माळा सी छै वा
पाणि कि तौलि मा जूनि सौंड्याळा सी छै वा
औंसि कि घनाघोर राति मुछ्याळि सी
अंधेरा मन मा आसै उज्याळि सी
कख देखी होली
सुपिन्यु ह्वे होलू.....।

झ्यूँतु तेरी जमादरी

हैंसल्ये स्य हैंसी तेरी सदानी नि रैण
आंख्यूँमा हमारी भि सदानी नि रैण-अंसाधरी।
सदानी नि रैण रे झ्यूँतु तेरी जमादरी
रे झ्यूँतू तेरी जमादरी ।।

एकहत्या राज तेरु सदानी नि रैण
मुण्डमा ताज दिदा सदानी नि रैण
पाळै सि सेक्की तेरी घाम आणै तक
अर घाम ऐगे अब धराधरी। सदानि नि रैण रे .....

जुलुम का अंधेरा कब तक राला
हम कुलि-कबाड्यूँका दिन भि आला
हमभि बटोरला कभि द्वी हातून
हमारी भि पोड़ली येनि घतासरी। सदानि नि रैण रे...
अंगोठू घिसे ठप्पा मारीमारी
पूरि नि मिली कभि मजुरी ध्याड़ी
ढुँगा बणिग्याँ हम माटम मिलिग्याँ
जुग जुग बटि ढुंगु माटु सर सरी। सदानि नि रैण रे....

साक्यूँ पुराणी खैरिका बोझ
बोकणा छाँ मोरी खपि की रोज
आँसू प्येकि भि तेरा गुण गैनी
पर निरदयी तिन दया नी करी। सदानी नि रैण रे...
धौंस-पट्टी तेरी कब तक सौण
मोरि मोरिकी चुचा कब तक ज्यूण
पोट्टग्यूँकि आग बणलि बणाग
सुलगलि चिनगरी जरा जरा करी। सदानि नि रैण रे...

धरति कि बिपदा
कैमा छै लोळा तू खैरि लगाणी
कैका मनै की कैन नि जाणी।

कैन नि सूणी डांड्यूँ कि खैरी
कैन नि फूंज्या डाळ्यूँ का आँसू
पुंगड्यूँ कि जिकुड्यूँ मा
साक्यूँ कि पिड़ा
धरति कि बिपदा कैन पछ्याणी?

कैका मनै की कैन नि जाणी।

पूस जडों मा निठाणेद घिंडुड़ी
स्वीलि पिड़ा मा बिबलांद घुघती
कैन कि पूछी
दुख्यारी हिलांस
गीत खुदेड़ किलै रालि गाणी
कैका मनै की कैन नि जाणी।

जेठा का घामू मा लगुल्यूँ पितेन्द
बंसुळी कि भौण मा फूल खुदेन्द
कैन पछ्याणी
चोळी कि तीस
जिकुड़ी मा डाम आँख्यूँ मा पाणी
कैका मनै की कैन नि जाणी।

राति कु दाना उड्यारु कणांद
डौराल डाळ्यूँ बाच लुकांद
कैन नि बींगि
बकारुणा कर्द
बसग्याळि रौला बौलों कि बाणी
कैका मनै की कैन नि जाणी।

बाटों का गारा ब्यखुनि का बग्त
जांदा बट्वे की अंद्वाळि लग्द
नि अटगिळि कैन
न कैन बुथैनी
निमैति बेटुलै सि तौंकि पराणी
कैका मनै की कैन नि जाणी।

6.6 अभ्यास प्रश्न

अभ्यास प्रश्न-

1. 'घाम' कविता में हिंवाळी काँठी कैसी बन गई हैं?

2. घाम ने कुतगेळी कहाँ लगाई?

3. 'कख देखि होली' कविता में मिर्चयुक्त तीखे भोजन में वह किसके समान है?

4. 'धरति कि बिपदा' कविता में किसकी बिपदा नहीं पहचानी गई?

5. 'इयूंतु तेरी जमादरी' कविता में मजदूरी करके मेहनतकश क्या बन गए हैं?

6.7 सारांश

घाम- गढ़गौरव नरेन्द्र सिंह नेगी द्वारा रचित यह गीत पहाड़ के सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक के जनजीवन का जीवन्त चित्रण है। वे प्रातः कालीन सूर्य की पहली किरण के आगमन पर कह उठते हैं कि जब प्रातः काल हिमाच्छादित पर्वत चोटियों पर धूप पड़ती है तो ऐसा लगता है 'हिंवाळी कांठी याने बर्फीले उत्तुंग शिखर चाँदी के बन गये हों, अर्थात् वे चाँदी की भांति चमक रहे हैं। यह देवभूमि है यहाँ के कंकर-कंकर में शंकर है, इसलिए इसके महात्म्य को जानते हुए धूप की पहली किरण भी शिव के कैलाश पर पहुँचती है और चरण वंदना करने बद्रीधाम जाती है। जैसे पर्वतों में धूप पसरती है, पवन पंछी, पर्वत पेड़-पौधे, सभी जग जाते हैं। जब धूप धीरे-धीरे कोमल फूलों की स्निग्ध पंखुड़ियों पर पहुँचती है तो उनके कोमलातिकोमल अंगों को 'कुतगळी' लग जाती है अर्थात् एक सुखद आनन्दानुभूति होती है। परिणामस्वरूप डालियों में फूल हँसने लगते हैं और उनकी हँसी पर मोहित होकर भँवरे व तितलियाँ प्रेमातुर होकर उन पर मंडराने लगते हैं। पर्वतों को जगाकर गाँव में पहुँची धूप अथक परिश्रम के कारण थकी सोई बेटी-बहुओं की आँखों पर जा पड़ती है जिसके कारण सुन्दर स्वप्नों में खोई उन प्रेमी अँखियों के सपने उड़ जाते हैं। जब पानी के धारों में पनिहारिनें बातों में मशगूल हो जाती हैं तो धूप उनके मुखमंडल पर आ गिरती है जिससे उनके मुरझाये चेहरे खिल उठते हैं। दोपहर की तेज धूप में घास-लकड़ी काटने जंगल में गई हुई घसियारिनें बोझा उतार के पेड़ों की छांव में बैठ जाती हैं। पेड़ों की शीतल छांव के कारण उन्हें नींद आ जाती है तभी पतरोळ के आने पर वह दरांती छीन लेता है। शाम को ढलती धूप जाने लगती है तो पर्वतों के पीछे चन्दा हँसने लगता है। घाटियों में एकदम अंधेरा पसर जाता है और पुनः पवन, पंछी, पर्वत, पेड़-पौधे सभी सो जाते हैं।

भाव पक्ष- गीत अत्यन्त भाव प्रवण व गहरी अनुभूति लिए हुए है। धूप की पहली किरण से हिमाच्छादित शिखर चाँदी के बन जाने की कल्पना अद्भुत है। कवि ने प्रातःकालीन सूर्य के मधुर स्पर्श से कोमल फूलों में 'कुतगळि' की अनुभूति व्यक्त की है। कवि ने धूप से फूलों को हँसाया है। युवतियों की स्वप्निल आँखों से उड़ते सपनों को देखा है। पनिहारिनों को सुख-दुख बांटते देखा

है, घसियारिनों की खैरी को महसूसा है। इन सभी दृश्यों को देखने के लिए कवि के पास सूक्ष्म दृष्टि व गहरी संवेदना है।

कला पक्ष- गीत का भाव पक्ष जितना मर्मस्पर्शी व आनन्दानुभूति देने वाला है कला पक्ष उतना ही लाक्षणिक व गरिमामय है। गीत का काव्य सौंदर्य उच्चकोटि का है। प्रकृति चित्रण के साथ शृंगार रस की छटा है तो वहीं उपमा, रूपक, अनुप्रास आदि अंलकारों का अद्भुत प्रयोग है।

बसन्त ऐगे- ऋतुओं का राजा बसन्त! उसी बसन्त का बड़ा ही मनोहारी वर्णन इस गीत में हुआ है। नरेन्द्र सिंह नेगी गीत विधा के महारथी हैं। सभी भाव प्रवण गीतों की तरह यह बसन्त ऋतु का मनोमस्तिष्क में फूल खिलाने वाला गीत भी मंत्रमुग्ध कर देने वाला है। बसन्त का शानदार मानवीकरण किया गया है। पहाड़ों में बसन्त किस तरह आता है उसका बेहतरीन वर्णन करते हुए गीतकार कह उठते हैं कि बसन्त आह्लादित होकर नाचता-गाता हुआ आ गया है। वह अपने कोमल पाँवों से ठुमुक-ठुमुक चलकर हमारी लिपाई की हुई डिंड्याळ्यूँ में आ गया है। दिन-रात के साथ मनुष्य भी बासन्ती रंग में रंग गया है। भौंरे-तितलियों की बारात, पालकी भी बसन्ती है। गेहूँ, जौ के हरे-भरे खेतों ने मानो सरसों के पीले फूलों की पीली ओढ़नी ओढ़ ली है। रंग-बिरंगी छींट वाली टोपी पहनकर बसन्त फूलों की डालियों में आ गया है। बसन्त आने पर चेहरे प्रफुल्लित हैं। गाल सूर्ख हो गये हैं। आँखों से बसन्ती स्वप्न निःसृत हो रहे हैं। उल्लास भरे हृदयों से प्रेम छलक रहा है। बसन्त नन्हीं-नन्हीं बालिकाओं के नाक-कानों में सूत पहना गया है। रूखे-सूखे पर्वत हरे-भरे हो गये हैं। न जाने कौन उनका शृंगार कर गया है। बुग्यालों में बसन्ती धूप पसरी हुई है। प्रसन्न होकर चिड़ियाँ भी चहचहाने लगी हैं। मधुमक्खियों के साथ गुनगुनाता हुआ बसन्त आलों में शहद भरे आ गया है। बसन्त आने पर प्राकृतिक सुन्दरता देखते ही बनती है। चारों ओर सुन्दरता और प्रेम का ही वातावरण दिखाई देता है। बसन्त ऋतु में प्रकृति चित्रण का यह उत्कृष्ट गीत है।

भाव पक्ष- बसन्त ऋतु में प्रकृति चित्रण के माध्यम से प्रेम व सौंदर्य के कोमल भाव व्यक्त हो रहे हैं। बसन्त के आगमन पर प्रकृति का जीवन्त हो जाना नाचना गाना, खुशियाँ मनाना सबकी खुशहाली की कामना करना, पर्वतों में प्रकृति के जड़, चेतन पदार्थों में बसन्त आने पर जो हर्षोल्लास देखा जाता है, यह गीत उसके चरमोत्कर्ष का भाव उत्पन्न करता है।

कला पक्ष- कला पक्ष की दृष्टि से यह प्रकृति चित्रण व ऋतु वर्णन की अद्वितीय रचना है। शृंगार रस से ओत-प्रोत यह रचना प्रेम का प्रसार करती दीखती है। छन्दों में जगह-जगह पुनरुक्ति प्रकाश देखा जा सकता है। जैसे रुणुक-झुणुक, ठुमुक-ठुमुक आदि। गीत में मानवीकरण की छटा विद्यमान है। गीत में अनुप्रास, रूपक, उपमा दृष्टव्य हैं। साथ ही व्यंजना व लक्षणा शब्द शक्ति भी दृष्टिगोचर होती है अर्थात् रस, छन्द, अंलकार से सुसज्जित इस गीत को इसका अनुपम काव्य सौंदर्य अमरत्व प्रदान करता है।

कख देखि होली- गढ़वाली काव्य की गेय परम्परा को समृद्ध और अनुप्राणित करने वाले गीतकार नरेन्द्र सिंह नेगी का यह गीत एक रसिक युवा हृदय की रसानुभूति है। जो कि किसी नवयौवना सुन्दरी को देखकर उसके प्रेम जाल में फंस गया है। वह स्वयं अचम्भित है कि आखिर उसे देखा है तो कहाँ देखा है क्या यह स्वप्न मात्र है या कोई वहम है? क्या है? वह स्वयं उसके रूप-रंग को देखकर बौराया हुआ है। वह अपनी धरती के अनेकानेक बिम्ब व प्रतीकों से उसकी सुन्दरता की तुलना करता है। वह इतनी सरस है कि जितना हिंसर का फल, इतनी नाजुक कि पिण्डालू के पत्ते पर गिरी ओंस की बूँद। वह किसी वृद्ध के विवाह का अतृप्त स्वप्न है। गर्मियों की तपती धूप में पहाड़ी स्रोत का ठण्डा पानी है। वह बादलों के मध्य चाँद-सी दिखती है। सर्दियों में गुनगुनी धूप है। तीखे भोजन में खीर-सी मीठी है। दूर प्रदेश में घर से आई चिट्ठी है। वह भूखे के सम्मुख भोजन की थाली सी है। आंगन के तीरे फलों से लदी नारंगी की डाली है। वह सोने के गले में मोतियों की माला की भांति है। पानी से भरे तौले (भगोनानुमा पीतल या तांबे का बर्तन) में चन्द्रमा की प्रतिच्छाया है। आमावस की रात में जलती मशाल है। अंधेरे मन में आशा का उजाला है। सृष्टि की जितनी भी सुन्दर उपमायें हैं वे नायिका में समाई हुई हैं। यही प्रेम की पराकाष्ठा है कि एक प्रेमी को सभी मनमोहक उपमान अपनी प्रेमिका में ही नजर आते हैं जिसका दृष्टान्त यह गीत है।

भाव पक्ष- एक युवा प्रेमी की अपनी प्रेयसी के प्रति गहरी प्रेमानुभूति है। प्रेम एक अलौकिक दृष्टि है जो सभी के पास नहीं किन्तु जिसके पास होती है फिर उसके भाव व भावना ऐसी ही होती है। यौवन के चरम पर एक प्रेमी हृदय में अपनी स्वप्न सुन्दरी के प्रति हृदय को आह्लदित करने वाले इससे अतिरिक्त और क्या भाव होंगे। अप्रतिम कल्पना एवं अनुभूति से ओत-प्रोत इस गीत का भाव पक्ष अद्वितीय है।

कला पक्ष- अनुपम सौन्दर्य बोध वाले इस गीत का कला पक्ष भी उच्चकोटि का है। शृंगार रस का अद्भुत गीत है यह। जिसमें मनुहार है, संयोग है व गहरी प्रेमानुभूति है। रस, छन्द, अंलकार की दृष्टि से यह रचना बेजोड़ है। किसी गीत में उपमा अलंकार की ऐसी अनूठी छटा कहीं और दिखनी दुर्लभ है। उपमा के साथ अनुप्रास, उत्प्रेक्षा व व्यतिरेक का भी सुन्दर नैसर्गिक प्रयोग है। प्रत्येक पंक्ति में नायिका को उपमाओं से विभूषित करना एक सिद्धहस्त साहित्यकार के बस की ही बात है जिसे गीतकार ने बखूबी किया है। हिंसरै गुन्दसी, ऊँसिकि बुन्दसी, जूनि झलक्क सी जैसी अनेक उष्कृष्ट उपमाएँ है। पिंडालु पात, दाना-दिवाना अनुप्रास के उदाहरण हैं। सार रूप में कहा जा सकता है गीत का काव्य सौन्दर्य दर्शनीय है, मीमांसा से परे है।

3. धरति कि बिपदा- कवि की कल्पना और यथार्थ का चित्रण करता यह गीत करुण रस प्रधान एक दार्शनिक व यथार्थवादी रचना है। जिसमें कवि कह रहा है कि हे मन! आखिर तू किसके पास अपनी पीड़ा बता रहा है, यहाँ किसी के मन की कोई नहीं जानता अर्थात् किसी का दुख कब किसी ने हल्का किया। यहाँ पर्वतों की पीड़ा किसी ने नहीं जानी, पेड़ों के आँसू किसी ने नहीं पोंछे, खेतों के हृदयों में सदियों की पीड़ा, धरति की विपदा को भी किसी ने नहीं पहचाना। पौष

की ठिठुरती ठण्ड में गौरैया का शीत लहर से मरणासन्न होना, प्रसव पीड़ा से व्याकुल फाखता और उस दुखियारी हिलाँस को भी किसने पूछा कि आखिर वह दर्द भरे गीत क्यों गाती रहती है? किसी ने नहीं जाना जेठ की धूप में कोमल बेल का झुलस जाना, बाँसुरी की धुन में फूल का व्याकुल होना! किसने जानी पपीहे की प्यास, जिसके हृदय में आग के जले का निशान और आँखों में पानी है, किसने जाना! किसी ने नहीं! घोर अंधेरी रातों में एकाकी कोई वृद्ध कराहता है, डर के मारे पेड़ चुपचाप हो जाते हैं, किसने जाना बरसात में नदी-नालों का करुण क्रन्दन, किसी ने नहीं! रास्तों के कंकड़ शाम के समय जाते हुए पथिक के साथ जाने की जिद करते हैं, उन्हें किसी ने समझा? किसी ने नहीं, अर्थात् इस संसार में कोई किसी के मन की व्यथा को नहीं जानता। किसी के आगे अपना दुखड़ा रोना व्यर्थ है, ऐसी कारुणिक व संवेदनशील रचना अन्यत्र दुर्लभ है।

भाव पक्ष- यह एक दार्शनिक रचना है। जिसमें कल्पना कवि की है किन्तु चित्रण यथार्थ का है। प्रत्येक बन्ध व छन्द में करुण रस की निष्पत्ति हो रही है। पर्वतों, नदियों, पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों, कंकड़-पत्थर से कवि एक ही प्रश्न पूछता है कि क्या कभी किसी ने तुम्हारे मन की पीड़ा को पहचाना। अर्थात् प्रकृति के सभी उपमानों के द्वारा मनुष्य के सरोकारों व संवेदना का कवि ने अनूठा प्रतिरोपण किया है। हृदय को विह्वल कर देने वाले कोमल कान्त भावों की यह एक श्रेष्ठ रचना है।

कला पक्ष- गीत में करुण रस व वियोग श्रृंगार की गहरी भाव अभिरंजना है। शब्दार्थालंकार दोनों ही विद्यमान हैं। गीत का कलापक्ष अत्यन्त हृदयग्राही व मार्मिक है। मानवीकरण की सुन्दर छटा है। शब्द चयन भावानुकूल है, जो पाठक के हृदय पर गहरा प्रभाव छोड़ता हैं। गीत पढ़कर या सुनकर पाठक व श्रोता स्वयं से भी प्रश्न करने को मजबूर हो जाता है। वह गीत में पूछे गये प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए उत्सुक होगा। यही कारुण्य भाव व उत्सुकता गीतकार की सफलता है। भाव पक्ष की भांति गीत का कलापक्ष भी किसी चमत्कार से कम नहीं और गीतकार ऐसे चमत्कार करने में माहिर है।

3. इ्यूंतू तेरि जमादरी- यह एक सशक्त जनवादी रचना है। जिसमें सामन्तशाही के खिलाफ जबरदस्त जनाक्रोश व्यक्त किया गया है। सर्वहारा वर्ग की सामूहिक संघर्षगाथा है जिसमें अन्याय व शोषण के खिलाफ प्रखर प्रतिकार व्यक्त किया गया है। कवि उस शोषक सामन्त को चेतावनी देते रहेंगे। तेरा एकछत्र राज हमेशा नहीं रहने वाला व यह सामान्तशाही भी सदा नहीं रहने वाली। जिस प्रकार पाले की शेखी धूप आने तक रहती है। वही हाल तेरा भी होगा क्योंकि हम प्रखर धूप बनकर आ गये हैं। तेरे जुल्म के अंधेरे आखिर कब तक रहेंगे। हम मजदूरों के दिन भी जरूर बहुरेंगे। ठप्पा मार-मार के हमारा अँगूठा घिसा किन्तु हमें कभी भी पूरी ध्याड़ी पारिश्रमिक नहीं मिला। हम मजूरी करते-करते पत्थर की भांति निष्प्राण व मिट्टी के समान चूर-चूर हो गये हैं। हम

सदियों से दुख, पीड़ा का बोझ ढो रहे हैं। तेरी बेगारी करते मर-खप गये हैं। हमने आँसू पीकर भी तेरे गुण गाये किन्तु तूने कभी भी कदापि दया नहीं की। आखिर तेरी धौंस, तेरा अन्याय हम कब तक सहें, मर-मर के कब तक जीना। हमारे पेट की आग अब वनाग्नि बन चुकी है। हमारे सब्र की चिन्गारी अब सुलग चुकी है अर्थात् अब हम दमन, शोषण नहीं सह सकते। अब हम एकजुट हो चुके हैं। अपने अधिकार व अन्याय के विरुद्ध निर्णायक युद्ध लड़ने का संकल्प कर चुके हैं।

भाव पक्ष- यह मेहनतकश समाज के दुख-दर्द, अन्याय शोषण का तीव्र प्रतिकार है। अर्थात् एक और तो शोषित, पीड़ित वर्ग की कारुणिक कथा है वहीं दूसरी ओर अभिजात्य वर्ग के अत्याचारों के विरुद्ध मेहनतकशों के प्रतिकार की संघर्षगाथा है। इस गीत में करुणा का भाव है तो वहीं संघर्ष का भी भाव है। युद्ध का आह्वान है। गीत में प्रयुक्त शब्दविन्यास व अर्थ गौरव के आधार पर कहा जा सकता है कि यह गीत जनचेतना व जन सरोकारों की गहरी संवेदना का अत्यन्त भावप्रवण गीत है।

कला पक्ष- भाव पक्ष की भांति इस गीत का कलापक्ष भी बहुत श्लाघनीय है। शब्दालंकार व अर्थालंकार का बेजोड़ प्रयोग है। गीत में करुण रस का भावोद्रेक है। उपमा, रूपक, अनुप्रास है। गीत के अनिवार्य पक्ष कलापक्ष की दृष्टि से इस रचना में कवित्व को अमरत्व प्रदान करने वाले सभी प्रतिमानों की उत्कृष्ट सृजना की गई है। सार संक्षेप यह है कि गीत का काव्य सौन्दर्य अनुपम है।

6.8 शब्दार्थ

इयूंतु- गीत के नायक का नाम, जमादरी- सामन्तशाही, सदनि- सदा, एकहत्या- एकछत्र, घतासरी- किसी सामान को कई चक्कर लगाकर बार-बार ले जाने का कार्य, ढुँगा- पत्थर, सरासरी- ढोते-ढोते, साक्यूं- सदियों के, खैरि- पीड़ा, बणाग- वनाग्नि, हिंवाळी- हिमाच्छादित पर्वत चोटियों, बिजी गैनी- जाग गये, कुतगेळी- गुदगुदी, रंगत- मदमस्त, मायादार- प्रेमी, मिस्ये- मशगूल, पितळण्या- पीतल जैसे अर्थात् मुरझाये, तैलू- तीव्र, स्वीलो घाम- ढलती हुई धूप, रुणुक-झुणुक- मदमस्त नाचता गाता, डांडा- पर्वत, साट्यूं- धान के खेतों का समूह, टल्खी- दुशाला या ओढ़नी, टुपक्याळी- छींट वाली, उलार्या जिकुड़ी- उल्लास उमंग भरे हृदय, सिणका- बच्चियों के नाक भेदने के बाद नाक में पहनाये जाने वाली एक वनस्पति विशेष की सूखी डंडी, चौंठी- ठोडी, चखुलि- चिड़िया, म्वारी- मधुमक्खी, जलोट्यूं- आलों में, यखि- यहीं, कख- कहाँ, बांद- सुन्दरी, बिराणी- परायी, सगोड़ि- सब्जी वाला खेत, पैणू- हर्ष में बाँटे जाने वाला पकवान या मिठाई, हिंसारै- एक जंगली फल, पिंडाळु- अरबी, दाना-दिवाना- बूढ़े, गाणि- स्वप्न, रूड़ी- गर्मी की ऋतु, मंगत्या- मांगने वाला, ह्यूंद- शीत ऋतु, मरचण्या- मिर्चयुक्त तीखा, सौंड्यळा- प्रतिच्छाया, मुछ्याळी- जलती लकड़ी, खैरि-व्यथा, निठाणेद- ठण्ड से त्रस्त, घिंडुड़ी- गौरैया, स्वीलि पिड़ा- प्रसव वेदना, बिबलांद- अत्यधिक व्याकुल, घुघती- फाखता, लगुलि- बेल, पितेन्द-

परेशान होना, खुदेन्द- किसी की याद में व्यथित होना, चोळी-पपीहा, तीस-प्यास, डाम-जले का निशान, बाटों का गारा- रास्ते के पत्थर, बट्वे-पथिक, अंद्वाळि- साथ जाने की जिद।

रचनाकार पर आधारित प्रश्नों के उत्तर- 12 अगस्त, 1949 पौड़ी गढ़वाल 2. सैरा बसग्याल बौण मा, 3. ढेबरा हर्चि गेनी, 4. खुचकण्डि, 5. सन् 1968 में।

रचना के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. चाँदी की, 2. फूलों की कोमल पंखुड़ियों में, 3. खीर के समान, 4. धरती की

6.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. खुचकण्डि- नरेन्द्र सिंह नेगी
2. मुट्ट बोटीकि रख- नरेन्द्र सिंह नेगी

6.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नरेन्द्र सिंह नेगी का साहित्यिक परिचय दीजिए।
2. 'बसन्त ऐगे' गीत के आधार पर बसन्त का प्राकृतिक चित्रण कीजिए।

इकाई- 7

सुरेन्द्र पाल - र्‌वटि, कविता, विश्वास, जाग, क्यांकु सुख, कै गौं का, पसिणा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्‌देश्य

7.3 कवि परिचय

7.4 अभ्यास प्रश्न

7.5 कविताएँ

7.6 अभ्यास प्रश्न

7.7 सारांश

7.8 शब्दार्थ

7.9 सन्दर्भ पुस्तकें

7.10 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

कवि सुरेन्द्र पाल निराशा से आशा की ओर ले जाने वाले कवि हैं। पहाड़ व पहाड़ की पीड़ा उनके हृदय में बसती है तथा कविता के रूप में फूटती है। पहाड़ों से हो रहे पलायन से वे भी चिन्तित हैं। कवि सुरेन्द्र पाल की रचनाएँ समाज में गरीब, शोषित व वंचित लोगों का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे गढ़वाली साहित्य में दलित चेतना के सूत्रधार कवि भी हैं। इस इकाई में कवि सुरेन्द्र पाल की 'चुंग्टि' कविता संग्रह की कुछ प्रतिनिधि कविताओं को लिया गया है। र्‌वटि शीर्षक कविता में कवि ने यह कहने का प्रयास किया है कि मनुष्य जो भी अच्छे-बुरे कर्म कर रहा है सब रोटी की खातिर कर रहा है। साथ ही कवि ने कविता के माध्यम से अपनी चिन्ता व्यक्त की है। वह किसी के साथ मिल-बांटकर नहीं खाना चाहता। कविता शीर्षक की कविता में कवि ने कवि मन में कविता की उत्पत्ति के राज को बताने का प्रयास किया है। विश्वास कविता में कवि ने धरती की पीड़ा को पाठक के सामने रखने का प्रयास किया है। जाग शीर्षक की कविता समाज के दबे-कुचले वंचित वर्ग को जगाने का प्रयास है अपने अधिकारों के लिए।

क्यांकु सुख नामक कविता में कवि ने उत्तराखण्ड राज्य की पीड़ा को पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयास किया है। कै गौं का शीर्षक की कविता में प्रवासियों द्वारा प्रवास के दौरान अपनी भाषा-संस्कृति सभ्यता के तिरस्कार की पीड़ा को पाठकों के सम्मुख रखा है। पसिन्या शीर्षक कविता में कवि ने आम आदमी की मेहनत की कमाई सफेदपोशों द्वारा हड़पे जाने की पीड़ा को व्यक्त किया है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः-

- अपनी कविता की समझ को और विकसित कर पायेंगे।
- कवि सुरेन्द्र की कुछ प्रमुख प्रतिनिधि कविताओं का रसास्वादन कर पायेंगे।
- कवि सुरेन्द्र पाल की कविताओं के माध्यम से उत्तराखण्ड के जनजीवन एवं मुख्य समस्याओं से परिचित होंगे।
- कवि सुरेन्द्र पाल की जीवनी व साहित्य संसार को जानेंगे।

7.3 कवि परिचय

साहित्यकार सुरेन्द्र पाल जी का जन्म 23 मार्च, 1952 में ग्राम गढ़मोनू, पट्टी खातस्यूं, जिला पौड़ी गढ़वाल में हुआ। शिक्षा- इण्टरमीडिएट व प्रयाग संगीत समिति से बाँसुरी में तृतीय वर्ष। प्रकाशित गढ़वाली साहित्य- 1. जाळ (उपन्यास) 2. चुंग्टि (कविता संग्रह) सम्मान- वर्ष 1994-95 का पं० आदित्यराम नवानी भाषा प्रोत्साहन सम्मान। 28 जनवरी 2000 में आपका देहान्त हो गया।

7.4 जीवनी के आधार पर अभ्यास प्रश्न

1. साहित्यकार सुरेन्द्र पाल जी का जन्म कब हुआ?
2. सुरेन्द्र पाल द्वारा लिखित उपन्यास का नाम क्या है?
3. कवि सुरेन्द्र पाल द्वारा लिखित कविता संग्रह का नाम लिखिए।
4. साहित्यकार सुरेन्द्र पाल को कौन-सा सम्मान मिला?

7.5 कविताएँ

र्‌वटि

मेरि समज मा नि ऐ
कि र्‌वटि हम खाणा छौं
कि र्‌वटि हमु थैं खाणी च?
र्‌वटि के बानू बिर्ड्यूं च बचपन
र्‌वटि के बानू बिक्णू च तन
र्‌वटि कै बानू हत्यूं पर छाळा
घामल फुके कि तन बि काळा
बिन् र्‌वट्यूं कि हडकूं कि माळा
र्‌वटि कै बान खाणू छौं गाळी

र्‌वटि के बान आळि-जाळि
जखम् द्याखा र्‌वट्यूं की छ्वीं
र्‌वटि च त्वे मा त सबि जगा त्वी
अर् नी च र्‌वटि त क्वी न क्वी
पर जमा कैकि बि कैल नी खै
करीं धरीं सबि यखि रै
तु स्वचणू छै मिन खूब खै
पर ईई तृष्णन तु चपै
वां से बढ़िया बांटि कि खांदु
बचि जांदु त, छोड़ि त जांदु

कविता

एक श्रीमान् जि मी तैं पुछण बैठिन
हे भै! कविता क्यांकु ब्वदन?
तुम कवि छौ, कविता लिख्दां
मी बि बता, कविता कन्कै लिख्दन?
मिन् बोले-
भुला! न त म्यार बुबन कविता लिखि
न म्यरा दिदा हि कवि छा
पर हाँ!
वूं बाब-दादूं के मुख बटि झड्यां उ शब्द
जु हर्च्यान साक्यूं बटि
अर दळे गेनि वूं खंद्वरुं पुटग
जु कबि नौ खम्भा तिबारि हूंदि छै
जख हमारा पुराणा घुंडा घुर्स-घुर्सी
रूंदा हैंसदा छा
वूं कु वो रुयुं, हैंस्यू, ब्वल्यूं, बच्ययूं
खोजिकि
वूं शब्दु कि माळा गंठ्याणू छौं
त्वैथैं सुणाणू छौं
अगर या कविता चा, त मि नि जण्दु
त्यारै सौं तू बि जै ले

वे खंद्वार पुटग खुजेले
एक-एक ढुंगि पर इनि
सौ-सौ कविता लेखले

विश्वास

आज बि टपराणी च वा उन्नि
पुछणी च जै कै मा
हे!
तिन बि द्याख
कख गै होलु म्यारु
मिन बोले जाणि दे जाणी
जब वै थई नी च तेरी
त वी जि क्या च त्यारु
बुबाऽ कन ब्वल्णू छै तू
जु खिलाय अपणि खुचिलिंद
जै कि मिन किलक्वरि सुणिनी
मेरीइ खुचिलिंद ख्वलिन वेन आंखी
म्यारै अन्न को रस वेन पैलि-पैलि चाखि
मेरीई छातिम ख्यल्दु छौ स्यू कूड़ि बाड़ि
चुटाणू रैन्दु छो मीउंद ढुंगि-गारि
वैकि चुटई ढुंगि-गारि समळींन जिकुड़ि पर लगईन
मेरि काया बिगड़ि बि गा त क्या
इनु बिजोग सचेई प्वाड़लु जु म्यारु मी तैं नि पछ्याणलु?
जरूर म्यारु एक दिन मी मा आलू मी थैं सस्यालु
आखिर वेकि ब्वे छौं मि लाटा!
धर्ति ब्वे

जाग

उठ!
अब सियूं न रा!
किलै छै पोड्यूं सुनिन्द
उठ

सबेर ह्वेगे
न हो जु
आज बि
ब्याळि कि तरौं
खळबट निकळ जा हत से
अर फिर
पाछम बैठीऽ मुण्डळि पकड़ी नि रै बैठ्यूं
सुबेर उठ जांदु मि त
इन नि हूंदु
कि उन नि हूंदु
लाटा- कतगा आज चलि गेनि
ब्याळि बणि कि
पर भोळ कैन देखी?
आंदु बि च कि न धौं
उठ
इलै अब सियूं न रा!

क्यांकु सुख

हे उत्तराखण्डै धर्ति! नमस्कार!
क्य छन समाचार?
कन छन वासि-प्रवासी?
समाचार क्य हुणिन बुबाऽ
नि ब्वलेन्दु
यु दुःख अब नि सयेन्दु
आज थैं कारु कंडळु खे, नि खै कि
बणै छा मिन कुछ साब, क्वी लपटैन,
क्वी कपटैन, क्वी डॉक्टर,
क्वी इंजीनियर, क्वी डिप्टी,
क्वी डायरेक्टर
पर क्य कन
बढ़दा जाणान जन-जन
बिसर्दि जाणान तन-तन

अपणि बोलि-भाषा, सभ्यता, संस्कृति
चढ़दि जाणु च वूं पर अंग्रेजि कु रंग
जां का ताळ दबे कि
भूलि गिन उ वीं
क्वादै र्‌वटि को रंग
जां पर बिलकदा छा सि भूका कुकूर सि
स्कूल बिटि ऐ कि
म्यारै घौ मा ख्यल्दा छा गुल्लि डंडा
आज
वूंकि गौळि बणी मौळि
अर जिकुड़ि जन बांजि पुंगड़ि
मेरी कोखि का मी जनै फकीदिन मुख
अब त्वी बोल ब्यटा मी कु
'क्यांकु सुख'?

कै गौं का
भीड़, भारि भीड़,
ए शहर मा!
सिर्फ मि यकुलु,
ई भीड़ मा, अपणु क्वी नी
ह्यर्णान कतनैं
पर बिना अपणैस कि नजर से
मि लगि जांदु सास
पर निराश
कैकु कैसे क्वी मतलब नी
म्यार मुल्का लोग
भूलि गिन अपणा मुल्कै मनख्यात
जब रस्ता चल्द बट्‌वै थैं
मिल्दु छौ क्वी ग्वेर
सासरै बेटि
दानु पिन्सनेर
दिख्दी पुछ्दु छौ

भैजी! कै गौं का?

पसिन्या
मि
पसिन्या ब्वगांदु
मेरि पसिन्या कि बुंद
धर्तिम पोड़िक
बणि जांद
मोती
जै तैं
म्यार पिछनैं खड़ा
सफेद बगुला
चैर जंदन
मगर-
यां पर क्वी फैसला
नि होणू च
युगूं बटिन

7. 6 सारांश

र्‌वटि- मेरी समझ में नहीं आया कि रोटी को हम खा रहे हैं या रोटी हमें खा रही है। इसी रोटी के चक्कर में बचपन भटका है। तन बिक रहा है। हथेलियों पर छाले हैं। धूप से जलकर तन काला पड़ा है। बिना रोटियों के शरीर जैसे अस्थियों की माला। इसी रोटी की खातिर खा रहा हूँ गाली। लोगों से दुश्मनी, जहाँ पर देखो, सुनो, बस रोटियों की बातें। गर रोटी है तेरे पास तो है सभी जगह तेरी पहुँच, और नहीं है गर तो, कोई नहीं है तेरा। पर, जमा करके भी सब किसी ने नहीं खाया, किया धरा सब यहीं छूट गया और तू सोच रहा है मैंने खूब खाया। इसी तृष्णा ने तुझे चबाया। इससे बढ़िया तू बाँटकर खाता और फिर भी बच जाता तो कुछ छोड़कर जाता।

कविता- एक श्रीमान जी मुझसे पूछने लगे, 'हे भाई! कविता किसे कहते हैं? तुम भी कवि हो, कविता लिखते हो। मुझे भी तो बताओ कविता कैसे लिखते हैं?' मैंने कहा, 'अनुज! न तो मेरे पिता ने कविता लिखी, न मेरे बड़े भाई कवि थे। पर हाँ! उन के मुख से ही छूटे शब्दों, जो खोये थे सदियों से और दबे थे उन खण्डहरों के नीचे जो कभी नौ खम्बों वाली तिबारी थी, जहाँ हमारे पूर्वज घुटने घिस-घिस कर रोते-हँसते थे। इनका वही रोया, हँसा, कहा ढूँढ़कर उनके शब्दों की

माला पिरो रहा हूँ, तुम्हें सुना रहा हूँ। अगर यह कविता है, तो मैं नहीं जानता। तुम्हारी कसम तुम भी जाओ उस खण्डहर के अन्दर और ढूँढ़ लो उसके एक-एक पत्थर पर ऐसी ही सौ-सौ कविताएँ।'

विश्वास- आज भी भटक रही है वह वैसे ही और पूछ रही है किसी से, हे! तुमने भी देखा कहाँ गया होगा मेरा अपना? मैंने कहा, जाने दो जाने दो। जब उसे ही नहीं है तेरी फिकर तो क्या है वह तेरा? बेटे! कैसे कह रहा है तू, जिसे खिलाया मैंने अपनी गोद में। जिसकी मैंने किलकारियाँ सुनीं। मेरी ही गोद में खोली थीं उसने आँखें, मेरे ही अन्न के रस को उसने पहले-पहले चखा, मेरी ही छाती में खेलता था वो, मेरे ही ऊपर फेंकता रहता था वो कंकड़-पत्थर। उसी के फेंके कंकड-पत्थरों को मैंने सम्भाला, हृदय से लगाया। मेरी काया बिगड़ भी गई तो क्या। ऐसा भी थोड़े ही होगा कि मेरा ही मेरे को नहीं पहचानेगा। जरूर मेरा अपना एक दिन लौटकर मेरे पास आयेगा, मुझे धीरज देगा। आखिर उसकी माँ जो हूँ मैं, धरती माँ।

जाग- उठ! अब मत सो!
क्यों पड़ा है बेसुध!
उठ! सुबह हो गई। कहीं ऐसा न हो कि कल की तरह आज भी फिसल जाये तेरे हाथ से और फिर पश्चाताप में सिर पकड़े बैठे रहो। सुबह उठ जाता मैं तो ऐसा नहीं होता, वैसा नहीं होता। कितने आज चले गये कल बनकर पर कल किसने देखा? आता भी है कि नहीं, इसलिए उठ, अब सोया न रह।

क्यांकु सुख- हे उत्तराखण्ड की धरती! तुझे नमस्कार। क्या हैं तेरे हाल-समाचार? कैसे हैं तेरे रैवासी प्रवासी? समाचार क्या होने हैं बेटे! कुछ कहा नहीं जाता, ये दुःख अब सहा नहीं जाता । आज तक खून-पसीना एक करके बनाये थे मैंने कुछ बड़े साहब, कुछ लेफ्टिनेंट कुछ कैप्टेन, कुछ डॉक्टर, कुछ इंजीनियर, कुछ डिप्टी कुछ डायरेक्टर पर क्या करना है। ज्यों-ज्यों ऊँचे उठते जा रहे हैं। भूलते जा रहे हैं अपनी बोली-भाषा, सभ्यता-संस्कृति। चढ़ता जा रहा है उन पर अंग्रेजी का रंग। जिसके नीचे दबकर भूल चुके हैं वे मंडुवे की रोटी का रंग, जिस पर कभी टूट पड़ते थे वे भूखे कुत्तों की तरह स्कूल से आकर। मेरे ही घर में खेलते थे वे गुल्ली डंडा। आज उनके गले मुलायम हो चुके हैं और हृदय तो बंजर खेतों की तरह कठोर। मेरी ही कोख के मुझ से ही फेरते हैं अपनी नजर। अब तुम ही बताओ बेटे! मेरे लिए कैसा सुख?
कै गौं का- भीड़, बहुत भीड़ है इस शहर में। सिर्फ मैं ही अकेला हूँ इस भीड़ में जिसका कोई अपना नहीं है। देख रहे हैं कई पर बिना अपनेपन की नजर से। मैं देखने लगता हूँ एक आस से पर लगती है हाथ सिर्फ निराशा। यहाँ किसी को किसी से कोई मतलब नहीं है।

मेरे मुलुक के रैबासी भूल चुके हैं अपने मुलुक की मानवता, जब राह चलते बटोही को मिलता था कोई ग्वाला, ससुराल जाती बेटी या बुजुर्ग पेन्शनर, वह देखते ही पूछता था, भैजी! किस गाँव के हो?

पसिन्या- मैं पसीना बहाता हूँ। मेरे पसीने की बूँद धरती पर गिरकर बनती है मोती, जिसको मेरे पीछे खड़ा श्वेत वर्ण का बगुला चट कर जाता है। मगर इस पर कोई फैसला नहीं हो रहा है युगों-युगों से।

7.7 अभ्यास प्रश्न

1. 'र्‌वटि' कविता में किस एकमात्र चीज के लिए मनुष्य सारे कष्ट सह रहा है?
2. 'कविता' शीर्षक की कविता में कवि ने कविता को कहाँ से उपजा बताया है?
3. 'विश्वास' नामक कविता में कवि ने किसकी पीड़ा व्यक्त की है?
4. 'जाग' कविता में कवि ने किसे जगाने का प्रयास किया है?
5. 'क्यांकु सुख' नामक कविता में कवि ने किसकी पीड़ा को व्यक्त व्यक्त किया है?
6. 'कै गौं का' कविता में कवि ने कौन-सी चिन्ता प्रदर्शित करने का प्रयास किया है?
7. 'पसिन्या' नामक कविता में कवि ने कौन-सी चिन्ता प्रकट की है?

7.8 शब्दार्थ

र्‌वटि- रोटी, बिर्ड्यूं- भटका, हडकूं- हड़िडयों, आळि-जाळि- तिकड़म बाजी, साक्यूं- सदियों, खंद्वार- खण्डहर, घुंडा- घुटने, गंठ्याणु- गूंथना, खुचलिंद- गोद में, किलक्वरि- किलकारी, कूड़ि-बाड़ि- बच्चों का घर बनाने वाला खेल, ढुंगि- पत्थर, गारि- कंकड़, चुटयीं- फेंकी, बिजोग- बीज का भी अन्त (पूरी तरह से नष्ट), सस्यालु- धीरज देना, सुनिन्द- बेसुध, ब्याळि- बीता हुआ कल, मुण्डळि- सिर, भोळ- आने वाला कल, लपटैन- लेफ्टिनेंट, कपटैन- कैप्टेन, क्वादु- मंडुवा, जिकुड़ि- हृदय, बांजि- बंजर, पुंगड़ि- खेत, कोखि- कोख, फर्कदिन- मोड़ते हैं, गौं- गाँव, यकुलु- अकेला, ह्यर्णान- देख रहे हैं, अपणैस- अपनापन, मनख्यात- मनुष्यता, ग्वेर- ग्वाला, पसिन्या- पसीना, ब्वगांदु- बहाता हूँ।

कविताओं के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. रोटी के लिए 2. बाप-दादों के कहे शब्दों से, 3. धरती की, 4 आम आदमी को, 5 उत्तराखण्ड की, 6. प्रवासियों द्वारा अपनी भाषा संस्कृति के तिरस्कार की, 7. मेहनत के फल को दूसरों द्वारा हड़पने की।

रचनाकार पर आधारित अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. 23 मार्च 1952, 2 जाळ, 3. चुंग्टि, 4. पं० आदित्यराम नवानी सम्मान।

7.9 संदर्भ

1. चुंग्टि- सुरेन्द्र पाल

7.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. कवि सुरेन्द्र पाल की र्‌वटि, कविता, जाग व विश्वास नामक कविताओं का सार अपने शब्दों में लिखें।

2. कवि सुरेन्द्र पाल की 'क्यांकु सुख', 'कै गौं का' व 'पसिन्या' नामक कविताओं का सार अपने शब्दों में लिखें।

इकाई 8

नेत्रसिंह असवाल - नमस्कार, एक ढांगा से साक्षात्कार

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 कवि परिचय

8.4 अभ्यास प्रश्न

8.5 कविताएँ

8.6 अभ्यास प्रश्न

8.7 सारांश

8.8 शब्दार्थ

8.9 संदर्भ

8.10 निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

इस इकाई में गढ़वाली भाषा के वरिष्ठ साहित्यकार नेत्रसिंह असवाल की कुछ कविताओं का अध्ययन किया जायेगा। साहित्यकार नेत्रसिंह असवाल वर्तमान में गढ़वाली भाषा के श्रेष्ठ साहित्यकारों में से एक हैं। कवि नेत्रसिंह असवाल की कविताओं में व्यंग्य परिलक्षित होता है। वे समाज में व्याप्त समस्याओं को अपनी रचनाओं के माध्यम से पाठकों के सामने लाते हैं। समाज को व्यभिचारियों व भ्रष्टाचारियों से सावधान रहने हेतु अपनी रचनाओं से चेताते हैं।

नमस्कार शीर्षक की कविता में कवि अपने व्यंग्य के माध्यम से समाज के उन सफेदपोश व्यभिचारियों व भ्रष्टाचारियों को निशाना बनाते हैं जो अपने कुकृत्यों से समाज को खोखला कर रहे हैं। साथ ही उन्होंने उन लोगों पर भी व्यंग्य-बाणों से निशाना साधा है जो बिना किसी विरोध के अन्याय को सहन करते रहते हैं।

एक ढांगा से साक्षात्कार नामक कविता में कवि ने स्वयं को केन्द्रित करके एक आम आदमी पर व्यंग्य किया है। बोड़, बैल, सांड को प्रतीक मानकर कवि ने समाज के अलग-अलग व्यवहार के लोगों के कृत्यों को पाठकों के सामने रखने का प्रयास किया है। एक आम आदमी किस तरह जिम्मेदारियों के बोझ तले दबकर समय से पूर्व बुजुर्ग हो जाता है यह दिखाने का प्रयास किया गया है। साथ ही उन लोगों पर भी व्यंग्य किया है जो दूसरे का हक मारकर खूब पल्लवित-पुष्पित होते रहते हैं।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः-

- **कविता की व्यंग्य विधा से परिचित होंगे।**
- **व्यंग्य के माध्यम से समाज की समस्याओं को उकेरने की कला से परिचित होंगे।**
- **कवि नेत्रसिंह असवाल की जीवनी व साहित्य संसार से परिचित होंगे।**
- **कवि नेत्रसिंह असवाल की कुछ प्रतिनिधि रचनाओं का आनंद ले पायेंगे।**

8.3 कवि परिचय

साहित्यकार नेत्रसिंह असवाल का जन्म 10 दिसम्बर, 1958 में ग्राम तछवाड़, पट्टी जैंतोलस्यूं, जिला पौड़ी गढ़वाल में हुआ। आपकी माताजी का नाम श्रीमती जौहरी देवी व पिताजी का नाम श्री विक्रम सिंह असवाल है। शैक्षिक योग्यता कला स्नातक (दिल्ली विश्वविद्यालय से), आप 2018 में भारत के विधि और न्याय मंत्रालय से सहायक निदेशक/राजभाषा के पद से सेवानिवृत्त हुए। प्रकाशन- 'धै' (कविता संकलन अन्य सात कवियों के साथ) 1980, ढांगा से साक्षात्कार (कविता संग्रह) 1988।

सम्पादन- 'मंडाण' पत्रिका में कार्यकारी सम्पादक, सम्मान- 1. जय श्री सम्मान 1991, चन्द्र सिंह राही सम्मान 2019

8.4 जीवनी के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. **साहित्यकार नेत्रसिंह असवाल का जन्म कब हुआ?**
2. **नेत्रसिंह असवाल का सात अन्य कवियों के साथ कविता संकलन कौन सा है?**
3. **साहित्यकार नेत्रसिंह असवाल के कविता संग्रह का नाम लिखिए।**
4. **नेत्रसिंह असवाल को जय श्री सम्मान कब मिला?**

8.5 कविताएँ

नमस्कार

नमस्कार वूं खुणि
जु आँखा बूजी
चट्टेली, हुंगरा दीण पर मिस्याँ छन
ज्ञानौ राजपथ पतेड़णा छन।

नमस्कार वूं खुणि

जौं का शब्द दुमुख्या ह्वे गैन
एक मुख कुच्याकि दुँळि पुटग
हैंक मुखल्
वींइ दुँलि थैं तड़काणौ नाटिक कना छन
बाघ थै बुगुलु
अर बुगुलु थैं बाघ बताणा छन।

नमस्कार वूं खुणि
जु वोट दीणा छन-दींदै जाणा छन
फिर कपळि पर हथ लगै-फट्ट फट्ट
ह्यळि गडि-गडी
लोकतन्त्र खुण रूणा छन।

नमस्कार वूं खुणि
जु द्यबरा-बखरौं मुद्दे
स्याळ पैदा हूँणा छन
बेटि-बौड्यूँ पर मटीतेल चरणा छन
बुढ्या ब्वे-बाबु थै खंद्वार मा छोड़िकि छट्ट
ढुंगु फरकैकि भाज जाणा छन
अपणैऽ भै-बन्धु खुण खुंकरि पल्याणा छन
भैर खुणै बिरळि लस्स
पर भितर खुणै, खौंकाट बाघ बण्याँ छन।

नमस्कार वूं खुणि
जु सालाऽसाल मंदिरु मा गौड़ौ मुण्ड
अर मस्जिदु मा सुंगर चुलाणा छन
ल्हशौं मा बैठि के,
राजनीतिक समैणा सधणा छन
अनेकता मा एकतै कुतराण सुँघाणा छन।

नमस्कार वूं खुणि
जौंकि छाति
अगास मा घिलमुण्डि ख्यलदा एक से एक जाज
अर भयाँ राजपथ पर

हकचक नचदा अधनंगा आदिवासि देखी
यकनसि चौड़ि हूणी छन
उतड़े-उतड़ेकि ताळि बजाणा छन
राष्ट्रीय प्रगति कु घांड हलाणा छन।

नमस्कार वूं खुणि
जु सत्या-वान छन
सावित्री दगड़ बलात्कार कना छन
कतगौं की रांड
अर कतगौं की कूड़ि भंगुलु बुतुणु कना छन
फिर भि खूब हूंणा-खाणा छन
अर, सुबेर-स्याम डौंडि पिटैकि
अपणि नाक भि पल्याणा छन।

अर निफै दा, नमस्कार वूं खुणि भि
जु यु सब कुछ स्हैणा छन
स्है सकणा छन।

एक ढांगा से साक्षात्कार

भुला,
अब क्या सुणाण त्वे थै
अपणि रामकथा!

जब तक छौ मि बोड़
मिल भी मरींऽ-उतड़फल्ळि
उपड़ींऽ-कीला/त्वड़ींऽ-ज्यूड़ा
फ्वड़ींऽ-कथगौं के सिंग!
पर जब बटे-
धर्‌ये ज्यू काँधम्/स्यूँतु लग नाकाम्
मि बळद ह्वे ग्यों
यानि पक्कू बळदनाथ!

हाँ, अभि भि/कभि-कभि
मी पर ऐ जाँद-नरसिंहै झल्लाक!

पर, मैंगै, अभौ, गरीबि-सि दबलौं की मार
घास-पाणि बन्द-सि कंडळी टैरै झपाग
खैकि द्यबता/लुड़लूड़
अंध्यरि उबरी का कैलाश चलि जाँद।

म्वाटा-म्वाटा चिफळचट्ट
पैना सिंगूऽ जुँटदार छिरक्वा बोड़
मादेवाऽ साँड बणिगीं।
कुरचदीं कैकि सगोड़ि
उजड़दीं भीडु/सरँदीं वाडु/फुडदीं बाड़
करदीं उज्याड़-उपाड़
अर हम फिर भि
यूँ का ऐथर गौबन्द ह्वे जँदौं

भुला,
यूँ थैं पछ्यण्णू जरुरि छ
इ हमरीऽ दूदै कट्वरि का सैंत्या-पल्याँ गुराउ छन।

अस्सी-अस्सी वर्ष का हूण पर भि
डुँकरतल्ळि पर डुँकरतल्ळि/रोज खिर्तुमखिर्तु
अर मि
लाल पुँगड़ि चिर्वड्वद-चिर्वड्वद
तेतीसै मा चिर्वड़े ग्यों
ढांगु बणि ग्यों।

सांस फुलद-दमा छ
हौळ मा चलि नि सक्दु-
पुज्यदीं सात साख्यूं का पितर
जिंदगी भरै वफादारी का बदल
त्वड़े जँदीं हडका-हडका।

क्य कन!
ये गाँवै त रीत ही इनि छ-
कि बिंदरि गौड़ि मलास-मलास
अर बैलि गौड़ि गुरौ लगा!

भुला,
हमुल त अपणि उमर
जन खाइ/तन खाइ
अब तुम्हरै मुख नजर छ-
उतारि सकिल्या ये ज्यू?
तोड़ि सकिल्या ये चक्रव्यूह??

8.6 अभ्यास प्रश्न

1. **कवि ने लोकतंत्र पर दोषारोपण करने वाला किसे कहा है?**
2. **अन्त में कवि ने किसे नमस्कार कहा है?**
3. **कवि ने 'बोड़' शब्द किस अवस्था के लिए प्रयुक्त किया है?**
4. **कवि ने मादेवाऽ सांड किसे कहा है?**

8.7 सारांश

नमस्कार- इस कविता में कवि नेत्रसिंह असवाल ने अपने व्यंग्य बाणों से समाज के उन लोगों पर निशाना साधने की कोशिश की है जो दिखते तो सफेदपोश हैं किन्तु उनके कार्य समाज के लिए बहुत घातक होते हैं। जो खुद तो निठल्ले होते हैं किन्तु औरों के कार्यों पर दोषारोपण करते रहते हैं। कवि लिखते हैं कि नमस्कार उनके लिए जो आँखें बन्द कर बिना देखे, सुने, समझे दूसरे की बातों पर हाँ में हाँ मिलाकर अपनी सहमति दे रहे हैं तथा अपने ज्ञान का बखान कर रहे हैं।
नमस्कार उनके लिए जिनके शब्द द्विअर्थी होते हैं जो अपनी बातों से तिल का ताड़ बना देते हैं।
नमस्कार उनके लिए जो बिना सोचे-विचारे अपने मत का प्रयोग करते हैं और बाद में लोकतंत्र पर दोषारोपण करते हैं।

नमस्कार उनके लिए जो सीधे-सरल लोगों को अपनी चालबाजी से ठगते रहते हैं। बेटी-बहुओं की हत्या का पाप कर रहे हैं। बुजुर्ग माता-पिता को गाँव में छोड़ खुद परदेश चले जा रहे हैं। अपने ही भाइयों के दुश्मन बने हैं। घर में बाघ और बाहर भीगी बिल्ली बन जाते हैं।
नमस्कार उनके लिए जो साल दर साल धार्मिक उन्माद फैलाकर अपनी राजनीतिक रोटियाँ सेंकते हैं।
नमस्कार उनके लिए जो राष्ट्रीय प्रगति का सही आकलन नहीं कर पा रहे हैं और झूठी दिलासा में हर्षित हुए जा रहे हैं।

नमस्कार उन व्यभिचारियों के लिए जो समाज में अपने चेहरों पर मुखौटे लगाये आदर्श बने रहते हैं। खूब फल-फूल रहे हैं। सुबह ढोल बजा-बजाकर अपने आदर्शों के गीत गाते रहते हैं।

अन्त में नमस्कार उनके लिए भी जो यह सब सह रहे हैं, सह पा रहे हैं।

एक ढांगा से साक्षात्कार- भुला! अब क्या सुनाऊँ तुझे अपनी रामकथा। जब तक था मैं किशोरावस्था (बोड़) में मैंने भी खूब उछलकूद की। बड़ी-बड़ी शरारतें कीं परन्तु जब से जिम्मेदारी का बोझ कंधों पर आया, घर-गृहस्थी के बन्धन में बंधा, मैं असहाय, लाचार, मजबूर हो गया हूँ। हाँ, अभी भी मुझ पर कभी-कभी आ जाता है वह युवावस्था वाला जोश, वह उमंग पर मँहगाई व गरीबी की मार से आहत होकर उत्साह व उमंग क्षणभर में ही काफूर हो जाता है और मैं अपनी वास्तविकता में लौट जाता हूँ।

बड़े-बड़े कामचोर, ऐयाश व व्यभिचारियों ने अपनी ऊँची पहुँच व धूर्तता से प्राप्त कर लिया है श्रेष्ठता को। वे अपनी दादागिरी से हमें डराते-धमकाते रहते हैं। हमारे अधिकारों का हनन करते रहते हैं। हमारी वस्तुओं पर अपना अधिकार जताते रहते हैं, परन्तु हम फिर भी उनके आगे नतमस्तक हो जाते हैं।

भुला! इन्हें पहचानना बहुत जरूरी है, ये हमारे ही अन्न-धन से पले-बढ़े हैं। अस्सी-अस्सी साल के होने के बाद भी ये हर दिन उपद्रव करते रहते हैं। उत्पात मचाते रहते हैं और हम मात्र पैंतीस वर्ष की अवस्था में ही जिम्मेदारियों के बोझ तले दबकर वक्त से पहले ही बुजुर्ग हो चुके हैं।
अब हिम्मत जवाब देने लगी है, शरीर में ताकत भी पहले जैसे नहीं रही। हर किसी के द्वारा दुत्कारा जाने लगा है हमें। पूरी जिन्दगी की वफादारी के बदले सिर्फ दुत्कार मिलती है हमें, क्या करें। इस समाज की रीत ही ऐसी है। जब तक स्वार्थ है तभी तक पूछते हैं, स्वार्थ सिद्ध होते ही सभी सम्बन्ध समाप्त। भुला! हमने तो जैसे-तैसे अपनी उम्र निकाल ली। अब आपसे हमें बड़ी उम्मीद है कि आप इस अन्याय व अत्याचार के खिलाफ आगे आओगे, आवाज उठाओगे।

8.8 शब्दार्थ

हुंगरा- किसी की बातों को सुनते समय हूँ-हूँ की ध्वनि निकालना, दुमुख्या- दोमुँहा, ढ्यबरा- भेड़ें, बखरौं- बकरियों, स्याळ- सियार, पल्याणा- धार देना, कुतराण- कपड़ा जलने की गंध, उतड़ेकि- उछलकर, ढाँगा- बूढ़ा बैल, बोड़- नर बछड़ा, उतड़फळि- उछलकूद, उपड़ी- उखाड़े, कीला- खूँटे, ज्यूड़ा- पशु बाँधने की रस्सियाँ, ज्यू- जुआ, स्यूंतु- जानवरों के नाक में बाँधी जाने वाली रस्सी, बल्द- बैल, मैंगै- मंहगाई, कंडळि- बिच्छू घास, वाडु- खेत में बंटवारे हेतु लगा पत्थर, गुराउ- साँप, हडका- हड्डी, बिंदरि- गाभिन।

रचनाकार के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. 10 दिसम्बर, 1958, 2 धै, 3. ढांगा से साक्षात्कार, 4. 1991 में

रचना के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. मतदाताओं को , 2. अन्याय व अत्याचार सहने वालों को 3. किशोरावस्था , 4. कामचोर व व्यभिचारियों को

8.9 सन्दर्भ पुस्तकें

ढांगा से साक्षात्कार- नेत्रसिंह असवाल

8.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. **'नमस्कार' शीर्षक कविता का सार अपने शब्दों में लिखिए।**
2. **'ढांगा से साक्षात्कार' कविता में समाज की किन सिंगतियों की ओर संकेत किया गया है?**

इकाई-9

मदन मोहन डुकलाण - बर्सु बाद, जगा फर

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 कवि परिचय

9.4 अभ्यास प्रश्न

9.5 कविता

9.6 अभ्यास प्रश्न

9.7 सारांश

9.8 शब्दार्थ

9.9 संदर्भ

9.10 निबन्धात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

इस इकाई में गढ़वाली भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार मदन मोहन डुकलाण की कुछ प्रतिनिधि कविताओं का अध्ययन किया जायेगा। साहित्यकार मदन मोहन डुकलाण गढ़वाली साहित्य के उन श्रेष्ठ साहित्यकारों मे शामिल हैं जो अपनी बात को एक अलग अंदाज में पाठकों के सम्मुख रखते है। आप ठेठ गढ़वाली शब्दों को अपनी कविताओं में स्थान देते हैं।

'बर्सु बाद' नामक कविता एक प्रवासी के मन की पीड़ा को दर्शाती रचना है। जिसमें प्रवासी वर्षों बाद जब अपने गाँव जाता है तो उससे जुड़ी सारी वस्तुएं उसके घर लौटकर आने की खुशी में प्रफुल्लित हो जाती हैं। निर्जीव वस्तुओं का उनके उपयोग व उपभोग करने वालों से जो लगाव व जुड़ाव कवि ने दिखाया है यह उनकी रचनाधर्मिता का श्रेष्ठ उदाहरण है। 'जगा फर' नामक कविता में कवि कहता है कि सभी वस्तुएं अपनी जगह पर हैं। अपनी जगह पर नहीं हैं तो इनका उपयोग व उपभोग करने वाले। बहुत से कवियों ने पलायन को अपनी कविता का शीर्षक बनाकर रचनाएं की हैं किन्तु कवि मदन मोहन डुकलाण जी ने एक अलग अंदाज में उत्तराखण्ड की इस पीड़ा को पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयास किया है। कवि कहता है कि कुछ भी तो नहीं बदला सब वैसा ही है जैसे पहले था, बदला है तो सिर्फ इंसान जो अपनी विलासिता के लिए अपनी मातृभूमि को भी भूल जाता है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः-

- गढ़वाली कविता की अपनी समझ को और विकसित करेंगे।
- कवि मदन मोहन डुकलाण की कुछ प्रतिनिधि कविताओं का रसास्वादन करेंगे
- कवि मदन मोहन डुकलाण की जीवनी व साहित्य संसार से परिचित होंगे।
- कवि मदन मोहन डुकलाण की कविताओं के माध्यम से उत्तराखण्ड की पलायन की पीड़ा को समझेंगे।

9.3 कवि परिचय

साहित्यकार, संस्कृतिकर्मी, सम्पादक मदन मोहन डुकलाण का जन्म 10 मार्च 1964 को ग्राम खनेता, पट्टी बिचला बदलपुर, जिला पौड़ी गढ़वाल में हुआ था। माताजी का नाम श्रीमती कपोत्री देवी पिताजी श्री गोविन्दराम डुकलाण हैं। आपकी प्राथमिक शिक्षा गाँव में ही हुई। उसके पश्चात् आप अपने पिताजी के साथ दिल्ली चले गये। आपकी आगे की शिक्षा दीक्षा पिताजी के साथ रहकर ही हुई। आप वर्तमान में ओ.एन.जी.सी. में प्रबन्धक (मानव संसाधन) के पद पर कार्यरत हैं। प्रकाशित गढ़वाली साहित्य- आंदि-जांदि सांस (कविता संग्रह), अपणो ऐना अपणि अन्वार (कविता संग्रह); सम्पादन- 1. सन् 1985 से गढ़वाली पत्रिका 'चिट्ठी पत्री' का सम्पादन, 2. ग्वथनी गौं बिटे (गढ़वाली काव्य संकलन), 3. अंग्वाळ (गढ़वाली काव्य संकलन), 4. हुंगरा (गढ़वाली कथा संकलन), 5. गढ़वाली के पहले कविता पोस्टर व कविता कलेण्डर का सम्पादन। सम्मान- 1. उत्तराखण्ड संस्कृति सम्मान (2005-06), 2. दून सम्मान (2008), 3. अखिल गढ़वाल सभा द्वारा सम्मान (2009) 4. डॉ० गोविन्द चातक सम्मान (उत्तराखण्ड भाषा संस्थान), 5. सर्वश्रेष्ठ अभिनेता याद आली टिहरी, 6. यंग उत्तराखण्ड सिने अवार्ड 2011, 7. उत्तराखण्ड शोध संस्थान सम्मान, 8. यूथ आइकन अवार्ड 2013, 9. कन्हैयालाल डंडरियाल सम्मान 2016

9.4 जीवनी के आधार पर अभ्यास प्रश्न

1. मदन मोहन डुकलाण जी का जन्म कब हुआ?
2. मदन मोहन डुकलाण की प्रथम काव्यकृति का नाम क्या है?
3. मदन मोहन डुकलाण जी के सम्पादन में छपे कथा संग्रह का नाम बताइए।
4. मदन मोहन डुकलाण जी को उत्तराखण्ड भाषा संस्थान से कौन-सा सम्मान मिला?

9.5 कविताएँ

बर्सु बाद

बर्सु बाद
मि घार गौं
अर मेरि
सिई कूड़ि बीजि गे
चौक नचण बैठे
सीढ़ि हिटण बैठि गैन
जळ्वट्यून कन्दूण लगैन
खिड़की ऑखि ख्वलण बैठि गैन
देळिन स्यवा लगे
अर
द्वार अंग्वाळ ब्वटण बैठि गैन।

बर्सु बाद
मि रस्वड़ा मा गौं त
रुवण्यां धुआं हैंसण बैठि गे
दिवाल भुक्कि पीण बैठि गे
धुरपळि आशीष दीण लै गे
चुल्ला आग भुबराण लै गे
सिल्वटा गिच रस्याण ऐगे
अब मेरि भूख बिबळाण लैगे।

बर्सु बाद
मि पंद्यरा मा गौं
पाणी मा सिंवळु जम्यूं छौ
पंदळो गुमसुम चुपन्यूं छौ
मी देखी
पाणी खकळट कन बैठि गे
पंदाळो हर्ष मा
आंसू ब्वगाण लै गे

मिन झट छम्वटो लगे
बर्सु की तीस बुझे
म्यारु ज्यू छत-बत ह्वेगे
अर
पंद्यरौ पराण
पाणी-पाणी ह्वेगे
बर्सु बाद.....बर्सु बाद।

जगा फर
सब्या धाणी
अपणी जगा फर छन
चुल्लो/अनगिरो/लटे/घुरपळो
सिल्वटो/जन्दरो/उर्ख्यळो
ड्वारा/पर्या/डुखुळा
ग्याडा/बारी/तौला
कस्रया/गगरा/तम्वळा
अपणी जगा फर छन सब
पण
नि छन जगा फर
यूँ तैं बरतण वळा।

जगा पर छन
द्यू-धुपाणु/द्यबता-ठौ
हल्दी-अक्षत/तिल-जौ
डौंर-थाळी/ढोल-दमौ
सिद्ध, नागरजा भैरों
अपणी जगा पर छन सब
पण
नि छन जगा फर
यों तैं पुजदरि मौ।
जगा फर छन
हैळ-लठ्यूड़

निसुड़ा-जू
कुटळा-दंदळा
पुंगड़ा-पटळा
अपणी जगा फर छन सब
पण नि छन जग ाफर
कन्न-कमौण वळा।

सब कुछ जगा फर छ
पण
जगा फर नि छन
जगा-जगों जयां लोग
झणि वो कनि
'जगा बैठ्यां' छन
कखि वो
कुजगा त नि बैठ्यां छन!

9.6 अभ्यास प्रश्न

1. कवि वर्षों बाद कहाँ गया था?
2. कवि को देखकर रसोईघर में कौन हँसने लगे?
3. कवि के अनुसार कौन अपनी जगह पर नहीं हैं?
4. किसे पूजने वाले अपने जगह पर नहीं हैं?

9.7 सारांश

कवि मोहन डुकलाण ने इस कविता के माध्यम से अपने गाँव, घर, आंगन से लगाव को पाठकों के सम्मुख रखने की कोशिश की है। कवि लिखते हैं कि :-

वर्षों बाद जब मैं घर गया तो तो मेरा सोया हुआ मकान जाग गया, आंगन नाचने लगा। सीढ़ियाँ चलने लगीं, आला कान लगाकर सुनने लगा। खिड़कियाँ आँखें खोलकर बैठ गईं। देहरी ने चरण स्पर्श किये और द्वारों ने बाँहें फैलाकर आलिंगन किया।

वर्षों बाद मैं रसोईघर में गया तो रोता हुआ धुआं हँसने लगा। दीवारें लगी। छत की मुंडेर आशीष देने लगी। पत्थर की चक्की गीत गाने लगी। चूल्हे की आग भरभराने लगी और मेरी भूख असहनीय हो गई।

वर्षों बाद मैं पनघट पर गया। पानी में शैवाल जीमी थी। पानी का धारा गुमसुम-सा था। मझे देखकर पानी खिलखिलाकर बहने लगा। धारा हर्ष में अश्रुधारा बहाने लगा। मैंने झट से अंजुरी लगाई और अपनी वर्षों की प्यास बुझाई। मेरा हृदय तरबतर हो गया और पनघट का पराण पानी-पानी हो गया। वर्षों बाद.....वर्षों बाद।

जगा फर- इस कविता में कवि मदन मोहन डुकलाण ने उत्तराखण्ड से हो रहे पलायन को एक नये ढंग से पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयास किया है। कवि ने स्थानीय जनजीवन की वस्तुओं को आधार बनाकर पलायन कर पहाड़ छोड़ चुके प्रवासियों पर एक कटाक्ष किया है। कवि लिखता है कि :-

सभी वस्तुएं अपनी जगह पर हैं, चूल्हा, अनगिर मुंडेर, सिलबटा, जन्दरी, ओखली, कंडी, गागर, कसेरी, तौली, हांडी, सब अपनी जगह पर हैं पर नहीं हैं अपनी जगह पर तो सिर्फ इनका उपयोग करने वाले, इनसे जीवन चलाने वाले। अपनी जगह पर हैं दीप, धूप, देवता, देवताओं के थान, हल्दी, अक्षत, तिल, जौ, डौंर-थाली। ढोल-दमाऊँ, सिद्ध नागरजा, भैरों सब अपनी जगह पर हैं पर नहीं हैं अपनी जगह पर तो उनकी पूजा करने वाले। इन्हें पूजने वाले।

अपनी जगह पर है हल, लाट, फाल, जुआ, कुदाल, दंदाल, खेत-खलिहान सब अपनी जगह पर हैं। अपनी जगह पर नहीं हैं तो इनका उपयोग कर खेतों को आबाद करने वाले अपनी आजीविका चलाने वाले।

सब कुछ अपनी जगह पर है पर अपनी जगह पर नहीं हैं जगह-जगह गये लोग। न जाने वे कैसी जगह बैठे हैं? कहीं ऐसी जगह तो नहीं बैठे हैं? कि जहाँ उनका अहित हो जाए!

9.8 शब्दार्थ

बर्सु- वर्षों, कूड़ि- मकान, हिटण- चलने, जळ्वटि- आला, ताक, कन्दूड़- कान, देळि- देहरी, अंग्वाळ- आलिंगन, भुक्कि- चुम्बन, धुरपळि- मुंडेर, जंदरि- पत्थर की अनाज पीसने वाली चक्की, सिल्वटा- सिलबटा, पंद्यारा- पनघट, सिंवळु- शैवाल, पंदळो- पानी का धारा, छम्वटु- अंजुरि लगाकर धारे का पानी पीना, तीस- प्यास, धाणी- वस्तुएँ, चुल्लो- चूल्हा, अनगिर- चूल्हे के ऊपर अनाज सुखाने हेतु बनाया स्थान, लटै- आवश्यक सामान रखने हेतु स्लिप, उर्ख्यळो- ओखली, ड्वारा- अनाज रखने हेतु लकड़ी की बड़ी कंडी, पर्या- दही मथने हेतु लकड़ी का बड़ा बर्तन, डखुळा- लकड़ी की हांडी, ग्याड़ा- पीतल व ताबे का गागर नुमा बड़ा बर्तन, बारी- खाना बनाने हेतु बड़ा बर्तन, तौला- टब नुमा बड़ा पात्र, कसर्या- कसेरी, तम्बळा- ताम्बे का बना पानी का पात्र (गागर से छोटा), बरतण- उपयोग, धुपाणु- धूप, ठौ- स्थान, हैळ- हल, लठ्यूड- लाट, निसुड़ा- फाल, जू- जुआ, कुटळा- कुदाल, दंदळा- फसलो से खरपतवार निकालने वाला लकड़ी का कृषि यंत्र, पुंगड़ा- खेत, पुटळा- छोटे खेत, कुजगा- अनजान जगह।

रचनाकार के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1. ग्राम खनेता, पट्टी बिचला बदलपुर, पौड़ी गढ़वाल में, 2 आंदि-जांदि सांस, 3. हुंगरा, 4. डॉ० गोविन्द चातक सम्मान

रचना के आधार पर प्रश्नों के उत्तर- 1. अपने घर, 2. धुआं 3. पहाड़ों में जन्म लेकर बाहर प्रवास करने वाले, 4. देवी-देवताओं को पूजने वाले।

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. अपणु ऐना अपणि अन्वार- मदन मोहन डुकलाण

9.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. 'बर्सु बाद' कविता का सार अपने शब्दों में लिखें।

2. 'जगा फर' कविता पलायन की समस्या को नए ढंग से हमारे समझ रखती है, स्पष्ट कीजिए।

इकाई-10

बीना बेंजवाल - उरख्याळो, चुल्लौं कि खातिर, बिसौणि कु ढुंगु, रुमुक

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 कवयित्री का जीवन परिचय

10.4 अभ्यास प्रश्न

10.5 कविताएँ

10.6 अभ्यास प्रश्न

10.7 सारांश

10.8 शब्दार्थ

10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

10.10 निबन्धात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

इस इकाई में कवयित्री बीना बेंजवाल की गढ़वाली की चार प्रतिनिधि रचनाओं को स्थान दिया गया है। पहली रचना उरख्याळो (ओखली) में कवयित्री ने पहाड़ी जनजीवन में ओखली के महत्व को प्रदर्शित किया है। साथ ही अपना दुख भी प्रकट किया है कि विकास के आगे लाचार ओखली का अपना अस्तित्व आज खतरे में है। 'उरख्याळो' (ओखली) कविता में कवयित्री बीना बेंजवाल की लोकानुभूति पत्थर की एक ओखली में मानवीय चेतना का अद्भुत स्पर्श पाती है। धान कूटने की चक्की के पहाड़ों में आने से पूर्व ओखली के बिना पहाड़ी जनजीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। सुबह रात खुलने से ही ओखली का कार्य आरम्भ हो जाता था। मात्र मनुष्य का ही नहीं पक्षियों के लिए भी भोजन प्राप्त करने का सहारा होती थी ओखली। कवयित्री लिखती हैं कि ओखली से न तो ध्वनि प्रदूषण होता है और न ही बिजली की कोई खपत होती है। सच कहें तो प्रगति के लिए प्रकृति का एक 'रैबार' यानी संदेश है 'उरख्याळी'। दुख इस बात का भी है कि विकास के आगे लाचार ओखली आज मूसल से बिछड़ती चली जा रही है। आज गाँवों में भी तिरस्कार का जीवन जी रही है ओखली।

चुल्लौं कि खातिर नामक कविता के माध्यम से कवयित्री ने उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन में अपने प्राणों की आहुति देने वाले शहीदों को पहाड़ी पक्षियों के माध्यम से पाठकों से जोड़ने का सुन्दर प्रयास किया है। कवयित्री ने शहीदों को पहाड़ी पक्षियों के रूप में धरती पर पुनर्जीवित कर उनसे

वार्ता करके उनके मन की बातों को पाठकों के सम्मुख रखने का सुन्दर प्रयास किया है। यह रचना उत्तराखण्ड आन्दोलन की यादों को ताजा कर देती है।

काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से रचना बहुत उत्कृष्ट है। पहाड़ के विभिन्न पक्षियों जैसे कफ्फू, मल्यो, काफळ पाकू, हिलांस, मेलुडी़, घुघुती को प्रतीक के रूप में लेकर कवयित्री ने रचना पर पंख लगा दिए हैं।

बिसौणि कु ढुंगु नामक कविता में निर्जीव पत्थर से किस तरह हमारा भावनात्मक लगाव हो जाता है और हमारी यादें जुड़ जाती हैं, यह दर्शाने का प्रयास किया गया है। एक बच्चे से बूढ़े तक की हजारों यादें विकास के नाम पर चकनाचूर उस पत्थर के साथ ही दफन हो जाती हैं सदैव-सदैव के लिए। कवयित्री बीना बेंजवाल ने इस कविता के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि किस तरह से एक निर्जीव पत्थर से भी हमारा भावनात्मक जुड़ाव होता है।

वह विश्राम का पत्थर हमारी कई पीढ़ियों के सुख-दुख का गवाह है। किस तरह एक विश्राम का पत्थर एक बच्चे से लेकर बूढ़े तक के जीवन की सुमधुर यादों को अपने में समेटे रहता है। किन्तु विकास के नाम पर लोगों की भावनाओं पर चोट करके उन्हें चकनाचूर कर दिया जाता है। लोग और स्वयं वह पत्थर भी इस सब के लिए तैयार भी हो जाते हैं यह सोचकर कि शायद अब विकास होगा, पहले से बेहतर होगा किन्तु भ्रष्टाचार व कुप्रशासन के कारण चूर-चूर हो जाती हैं उससे जुड़ी स्थानीय लोगों की भावनाएँ। हिल जाता है पत्थर अपने मूल स्थान से। धीरे-धीरे खिसक कर आ जाता है दिखावटी विकास पुरुषों की राह में और फिर एक दिन लुढ़का दिया जाता है उसे ढालदार पहाड़ी से नीचे सदैव-सदैव के लिए। और इस तरह अस्तित्व ही दफन हो जाता है उस पत्थर का तथा उससे जुड़ी सभी यादों का हिमालय के इतिहास की तरह।

रुमुक यानी सांझ। रात की देहरी पर खड़ी शाम की यह कविता उजाले को बरतने का शऊर सिखाती है। घरों में दीया-बाती करने वाली यह सांझ जीवन में सकारात्मकता का महत्व बताती हुई मानव को अपने व्यवहार में भी उजाले को सहेजने के लिए प्रेरित करती है। बूढ़ी आँखों में इंतजार करती शाम बचपन के आंगन में बच्चों संग खेलती मिलती है। यह मनुष्य के जीवन जीने के तरीके पर निर्भर करता है कि वह रुमुक को अंधेरे में भटकाव के रूप में देखता है या संवेदना के उजाले के रखरखाव के रूप में। इस कविता की नजर संपन्नता की खरीदारी पर भी है और विपन्नता की लाचारी पर भी।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः-

- साहित्य की कविता विधा की समझ विकसित करेंगे।

- **पहाड़ के जन-जीवन को समझ पायेंगे।**
- **उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन को समझेंगे।**
- **निर्जीव वस्तुओं से मानव के भावनात्मक लगाव को समझ पायेंगे।**
- **पहाड़ी जनजीवन से कई महत्वपूर्ण वस्तुएँ इस मशीनीयुग में समाप्त हो रही हैं, जान पायेंगे।**

10.3 कवि परिचय

गढ़वाली भाषा एवं साहित्य लेखन में संलग्न बीना बेंजवाल का जन्म 17 नवम्बर, 1967 को ग्राम देवशाल (गुप्तकाशी), रुद्रप्रयाग में हुआ। आपने केन्द्रीय विद्यालय में शिक्षिका के रूप में 25 वर्षों तक अपनी सेवा दी तथा वर्तमान में स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के पश्चात् लेखनरत हैं। शिक्षा- एम० ए० (हिन्दी), बी०एड०; प्रकाशित गढ़वाली साहित्य- 1. कमेड़ा आखर (कविता संग्रह-1996), 2. गढ़वाली हिन्दी शब्दकोश (संयुक्त) 2007, 3. हिन्दी, गढ़वाली, अंग्रेजी शब्दकोश (संयुक्त) 2018, 4. मिसेज रावतः देस दुन्यै स्त्री कविता (गढ़वाली अनुवाद) 2021;

सम्मान- आदित्यराम नवानी गढ़वाली भाषा प्रोत्साहन पुरस्कार 1993-94, के. वी. एस. नेशनल इन्सेंटिव अवॉर्ड (मानव संसाधन विकास मंत्रालय- 2009), उत्तराखण्ड भाषा संस्थान का वर्ष 2011-12 का डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल सम्मान, कन्हैयालाल डंडरियाल लोकभाषा सम्मान-2018 से सम्मानित।

10.4 जीवनी के आधार पर अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. कवयित्री बीना बेंजवाल का जन्म कब हुआ?

2. बीना बेंजवाल द्वारा लिखित गढ़वाली कविता संग्रह का नाम लिखिए।

3. बीना बेंजवाल का गढ़वाली हिन्दी शब्दकोश कब प्रकाशित हुआ?

4. कवयित्री बीना बेंजवाल को उत्तराखण्ड भाषा संस्थान द्वारा कौन-सा सम्मान दिया गया?

10.5 कविताएँ

उरख्याळो

किसाण हातौं कु उदंकार छ उरख्याळो,
नाज खुणि मुक्ति कु द्वार छ उरख्याळो।

गैंणौं स्यवाळ्द रतब्याणि बिजाळ्द,
ऐन-सैन ब्वे कि चार छ उरख्याळो।

खम्म-खम्म खाँसद कबि छुप-छुप बासद,
कबि खित्त चौंळ्वी छलार छ उरख्याळो।

टुप टुप टीपदन बूसा खत्यां कणखा,
चखुलौं तैं वीर्यौंद त्यवार छ उरख्याळो।

सुप्पि गंज्याळि छंटणी रखद खोज-खबर,
पुंगड़्वी बि देंद खबरसार छ उरख्याळो।

देसु-परदेसु भेजद च्यूड़ौं कि कुट्यरि,
पाड़ौ पोस्यूँ एक संस्कार छ उरख्याळो।

कौणि झंगोरु सट्टि कुट्ये बि जला चक्कि,
पीठु कूटणै जाणद बस सार छ उरख्याळो।

न इंजनै भक-भक न बिजल्यू फुकपट्ट,
प्रगति खुणि प्रकृति कु रैबार छ उरख्याळो।

छूटणू च सौंजड़्या गंज्याळि कु दगड़ो,
बिकासा अगनै लाचार छ उरख्याळो।

सहर बिचारु नि जाणद येकि सारतार,
गौं को सभौ अंद्वार छ उरख्याळो।

चुल्लौं कि खातिर

एकदां
पौंछिग्यूं डांडा
चुल्ला उंद आग जगौणौ
छिल्लौं कि खातिर
वख देखिन मिन
बनि-बन्या फूल
मनख्यूं कि भौण मा
बासणा चखुला
डांडा इन होंदन
वख चखुला
इन किलै बासदन

कळकळि-सी लगि
जिकुड़ि मा
सुद्द-बुद्द हरचण लगि
वीं दुन्या मा

देखदा-देखदि
एक बिसि से जादा
चखुला कट्ठा ह्वेगिन
अपणि-अपणि व्यथा
सुणौण लगिन
हुनकदा- हुनकदि
एक कफ्फून बोलि
खुदायां पराणन
अपणैसै गेड़ खोलि
आज तु हमसे
अपछ्याण छै होणी
पर हम सणि
जण्यी-पछ्यणी छै लगणी

खटीमै धरति मा
भरि छा जैन हुंगारा
वखि जैका स्वीणौंन
कुंगळा पात उफार्‌या
मि वु हि सलीम छऊँ
तुमारि दुन्या बिटि
स्यूंजड़ै उपड्यै गयूँ
हम सणि नि छौ रौंफु
चखुला बणणौ
अपणा होंदा-खांदा
घर सणि उजाड़णौ
कफ्वी आँख्यूं मा
अँसधारि लगिगे
बच्यांदि बाच

अधबिचै मा हर्चिगे

दू ऽ ऽ र
डाळै फौंटि मा बैठ्यूँ
मल्यो बोलण लगे
मैं पोलू कि
उमर हि क्य छै
चखुला बणणै
विकासा स्वीणौं मा
मि बि रंगमत्त बण्यू रैंदु
कौलेजा गेट पर
कछड़ि लगौंदु
सूणिन जब
यीं धरती सुसगरि
यींकि पीड़न
यनु उमाळ भरि...
मल्यो कि गौळि
अमोखेण लगिगे
व्यथै कुयेड़ि
जिकुड़ि पर पसरिगे

फेर त एकेक करी
काफल पाकू
हिलांस-मेलुड़िन
अपणि-अपणि व्यथा सुणाई
यूं मा बिटि क्वी
उखीमठै धरति
नि भेंटण पाई
त कैन नारसन अर
सिसौनै सड़क्यूं मा
जान गँवाई

आखिर मा द्वी घुघुती
हंसा अर बेलमतीन

मसूरी गोलिकाण्डै
याद दिलायि
घुमस्यांदि बाच मा
इनु बथायि

भुली!
तुम अपणा
चुल्ला जगौणौ छन
छिल्लौं अयां
अर हम मुलुका
चुल्लौं कि खातिर
पंछी बणी यख अयां
यु देखणौ
कि कबारि बदललि
ये मुलुकै अन्वार
कबारि तलक होलु
हरेक चुल्लो खुसाल!

बिसौणि कु ढुंगु

बिसौणि कु ढुंगु
जै मा सालु बिटिन
लगदि ऐ छै
बौण जांदि बग्त
बेटि-ब्वारियों कि
दाथुलि पळेंदा-पळेंदि
हैंसि-मजाक भरीं कछड़ि
अर बौण बिटि आंदि बग्त
जै मा अपणा घास-लाखड़ों कु
बोझ बिसैक मिटांदि छै
वु अपणि पळेख
कतना मगन होंद छौ ढुंगु
जब हम सब ग्वेर

अपणि साफै कुट्यरि पुछाळिक
वे मा फोड़ूण बैठद छा
अखोड़
अर तब गारा खेलण मा
बाजि पर बाजि चढ़ौण मा
मस्त हमारु खेल
तोड़द छा गोरु
उज्याड़ जैक
पर द्वी साल पैलि
ये हि बौण का बीच
खुलि एक सरकारि फारम
विकास का नौं पर
बाटु सुधारेगे
सुधार मा तोड़ेगे
हमारु बिसौणि कु ढुंगु
अर बिचारु ढुंगु
अपणि सालु पुराणी जगा पर
हि टूटि-टाटि गे
अर जु बचि बि छौ
सु ढगड्यांदु ह्वेगे
पर तब बि क्वी सिकैत
नि छै कै सणि
किलैकि विकासै
खुशि जु छै सबुतैं
पर अब
वीं सरकारि योजनै तरां
बिसौणि कु ढुंगु बि
लटगिगे अधबिचै मा
वे ढगड्यांदा ढुंगा मा
नि दिखेंदि अब
कै ग्वेरै छूटीं सोटगि
अर आज-ब्याळि का

अखोड़ फोड्यां
या दाथुलि-थमाळि
पळेयां कि निसाणि
बाटा का सुधार मा
हथौड़ौं कि ठक्-ठक्
बड़ा-बड़ा साबौं का
बूटों कि टक्-टक्
य आवाज बि अब
ना का बराबर सुणेंदि
कुछ दिन मा सरकि तैं
बाटा मा ऐ जालु ढुंगु
फिर अब वख मू बि
वेकि जर्वत नि समझी
लमडये जालु
वु उंदु बिट्ठा उंद
साक्यूं पुराणो
दादी-नानी का
जीवन-संघर्षौं साक्षि
हिमालै का इतिहासै तरां
दबि जालो कखि
हमारु बिसौणि कु ढुंगु।

रुमुक

रातै रौंदि द्वार रुमुक।
उज्यळै होंदि सार रुमुक।

जीणौ जैकु जनु सगोर
मिलदि वनि अंद्वार रुमुक।

द्यू बत्ती करदि कखि
धुत्त कखि गुज्यार रुमुक।

बग्तौ ही नी पौर एक
मनख्या बि ब्यवार रुमुक।

कुबाटा जंदर्‌वी कुकुरगति
घर बौड़ू सत्कार रुमुक।

दानि आँख्यूँ मा जग्वाळ
बाळौं तैं ख्यल्वार रुमुक।

कखि मुल्यौंदि भुज्जि-साग
भूखि कखि लाचार रुमुक।

मैनत-मजुरि कन्न वळौं
बिसौणी ढुंगी चार रुमुक।

बजारै भीड़ हरच्यां मनखि
मिलौंदि घर-संसार रुमुक।

10.6 सारांश

उरख्याळो- मेहनतकश लोगों के हाथ का गहना और अनाज को पूर्ण मुक्ति के द्वार तक पहुँचाने का द्वार है ओखली। तारों को सुलाकर भोर के तारे को जगाती एकदम माँ की तरह समय की पाबन्द है ओखली। कभी खम्म-खम्म खांसती, कभी छुप-छुप बोलती तो कभी चावलों की छिटकती खिलखिलाहट है ओखली। अनाज के छोटे-छोटे दानों को चुगती चिड़ियों के लिए तो जैसे त्योहार है ओखली। मूसल, सूप व अनाज को बिखरने से रोकने वाली छंटणी की रोज खोज खबर तो रखती ही है, साथ में खेतों की खबरसार भी देती है ओखली। देश-प्रदेश में चिउड़ों की पोटली भेजती है तो पहाड़ के रैबासियों की उदरपूर्ति का माध्यम है ओखली। सारे अनाज मशीन में कूट- पीस भी लें लेकिन अरसे (पहाड़ी मिठाई) बनाने के लिए पीठु (गीले चावल) कूटने ओखली में ही आना पड़ेगा। ओखली का सबसे बड़ा लाभ यह भी है कि इसमें न तो कोई ध्वनि प्रदूषण होता है और न ही इस पर कोई बिजली की खपत ही होती है। दुख इस बात का है कि समय के साथ विकास के नाम पर बेचारी ओखली का अपने संगी-साथी मूसल से साथ छूटता जा रहा है। शहर बेचारा नहीं जानता पर गाँव की तो रौनक भरी एक विशिष्ट पहचान होती है ओखली।

चुल्लौं कि खातिर कवयित्री लिखती हैं कि एक बार वह छिल्लौं (चीड़ की शीघ्र आग पकड़ने वाली लकड़ी) लेने पहाड़ी पर स्थित जंगल में गई। वहाँ उसने तरह-तरह के फूल व मनुष्यों की भाषा में बात करते बहुत से पक्षियों को देखा। कवयित्री उनकी तरह-तरह की आवाज़ें सुनकर अपनी सुध-बुध खो बैठी। देखते ही देखते 20 से अधिक पक्षी उसके सामने अपनी व्यथा सुनाने को एकत्र हो गये। सिसकते-सिसकते कफ्फू ने कहा, 'आज तुम हमसे अपरिचित हो रही हो परन्तु

हमें तुम जानी पहचानी-सी लगती हो। मैं सलीम हूँ जिसने खटीमा की धरती पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया था।' कहते-कहते कफ्फू की आँखों से अश्रुधारा बहने लगी व आवाज़ कहीं गुम-सी हो गयी। दूर पेड़ की शाखा पर बैठा मल्यो कहने लगा, 'मैं पोलू हूँ, अभी उम्र ही कहाँ थी मेरी चिड़िया बनने की। आज मैं भी विकास के सपने देखता और कॉलेज के गेट पर दोस्तों संग गोष्ठी करता।' कहते-कहते वह सिसकने लगा और उसकी व्यथा घने कोहरे की भांति चारों ओर पसर गई। फिर तो एक-एक करके काफळ पाकू, मेलुड़ी ने अपनी व्यथा-कथा सुनाई। इनमें से कोई ऊखीमठ की धरती को नहीं भेंट पाया था तो किसी ने नारसन में जान गंवाई थी।

अन्त में दो घुघुती हंसा व बेलमती ने मसूरी गोलीकाण्ड की याद दिलाते हुए कहा, 'तुम अपने चूल्हों को सुलगाने हेतु छिल्ले लेने यहाँ आये हो और हम सारे मुल्क के चूल्हों की खातिर पक्षी बनकर यह देखने यहाँ आये हैं कि कब बदलेगी इस राज्य की तस्वीर? आखिर कब तक होगा यहाँ का हर चूल्हा खुशहाल?'

बिसौणि कु ढुंगु- विश्राम का पत्थर जिस पर सालों से सजती आई थी जंगल जाती बहू-बेटियों की महफिलें। जंगल से लौटते हुए मिटाती थीं जहाँ पर वे अपनी दिनभर की थकान टिकाकर उस पत्थर पर अपना बोझ। उस विश्राम के पत्थर पर आ जाती थी रौनक जब हम उस पर बैठकर खोलते थे चिउड़े-चबैने की अपनी-अपनी पोटलियाँ। फोड़ते थे अखरोट, खेलते थे गिट्टियाँ एक-दूसरे को हराने के लिए। किन्तु दो साल पहले उसी जंगल के बीच खुला एक सरकारी फार्म और विकास के नाम पर रास्ते के सुधारीकरण हेतु तोड़ दिया गया वह पत्थर। बेचारा पत्थर अपनी वर्षों पुरानी जगह पर ही चकनाचूर हो गया। जो थोड़ा-बहुत बचा भी तो वह हिलने लगा। तब भी कोई शिकायत नहीं थी उसे किसी से क्योंकि विकास की खुशी जो थी। पर अब उस सरकारी योजना की तरह अधर में लटक गया है वह विश्राम का पत्थर भी। अब नहीं दिखती उस पर किसी ग्वाले की छूटी डंडी, टूटे अखरोटों के छिलके या दंराती-पाठल पर धार चढ़ाने के निशान।

अब हथौड़ों की ठक-ठक व बड़े साहबों के बूटों की टक-टक की आवाजें भी नहीं के बराबर सुनाई देती हैं। कुछ दिनों में खिसक कर रास्ते में आ जाएगा वह पत्थर और फिर लुढ़का दिया जाएगा पहाड़ी से नीचे। सदियों पुराना, दादी-नानी के जीवन संघर्ष का साक्षी विश्राम का वह पत्थर हिमालय के इतिहास की तरह सदैव-सदैव के लिए कहीं दफन हो जायेगा।

रुमुक कविता के अनुसार सांझ रात्रि की दहलीज पर उजाले की एक तरकीब है। जिस मनुष्य की जैसी जीवन पद्धति होती है शाम उसी अनुसार उससे मिलती है। किसी घर में दीये की लौ बन जलती है तो कहीं बाहर अंधेरे के भटकाव में मिलती है। वक्त का एक प्रहर ही नहीं यह मनुष्य के व्यवहार में भी निहित रहती है। सांझ कुपथ जाने वालों की दुर्दशा तो घर लौटने वालों का स्वागत करती है। बूढ़ी आँखों में प्रतीक्षा तो बचपन में खेल की मस्ती बन रहती है। संपन्नता में

सब्जी-तरकारी का मोलभाव करती तो विपन्नता में भूख से लड़ती मिलती है। मेहनत मजदूरी करने वालों को विश्राम स्थल की तरह दिखती यह सांझ ही दिनभर भीड़ में खोये मनुष्य को उसके घर-संसार से मिलाती है।

10.7 अभ्यास प्रश्न

1. 'उरख्याळो' को हिन्दी में क्या कहते हैं?
2. 'चुल्लौं कि खातिर' कविता में किन की पीड़ा को दर्शाया गया है?
3. 'बिसौणि कु ढुंगु' क्यों तोड़ा गया?
4. 'रुमुक' शब्द का हिंदी में अर्थ बताइए।

10.8 शब्दावली

उरख्याळो- ओखल, उदंकार- उषाकाल का प्रकाश, रतब्याणि- भोर का तारा, कणखा- चावल के टूटे दाने, सुप्पि- सूप, गंज्याळि- मूसल, पुंगड़ि- खेत, कुट्यरि- पोटली, चुल्लौं- चूल्हों, भौण-लय, चखुला- चिड़िया, कळकळि- कसक, जिकुड़ि- हृदय, हरचण- खोना, हुनकदा-हुनकदि- सुबकते-सुबकते, गेड़- गाँठ, अपछ्याण- अपरिचित, कुंगळा- कोमल, स्यूंजड़ै- जड़ सहित, उमाळ- उबाल, रौंफु- उत्साह, अँसधारि- अश्रुधारा, कछड़ि- महफिल, बिसौणि कु ढुंगु- विश्राम का पत्थर, दाथुलि- दरांती, बौण- वन, पळेख- थकान, अखोड़- अखरोट, गारा- गिट्टियाँ, ढंगड्यांदा- हिलने वाले, गुज्यार- गंदगी वाला स्थान, बग्तौ- समय का, पौर- प्रहर, सार- तरकीब, सगोर- शऊर, अंद्वार- सूरत, कुबाटा- कुमार्ग, ब्यवार- व्यवहार, घर बौड़ू- घर लौटने वालों का, कुकरगति- दुर्गति, दानि- बूढ़ी, जग्वाळ- प्रतीक्षा, ख्यल्वार- खेलने वाली, बाळौं- बच्चों, मुल्यौंदि- मोल भाव करती, चार- की तरह, हरच्यां- खोये हुए, मनखि- मनुष्य।

कवयित्री के जीवन पर आधारित प्रश्नों के उत्तर- 1. 17 नवम्बर, 1967, 2 कमेड़ा आखर 3. 2007 में 4. डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल

रचना के आधार पर प्रश्नों के उत्तर- 1. ओखल, 2. उत्तराखण्ड आंदोलन के शहीदों की, 3. विकास की खातिर, 4. सांझ

10.9 सन्दर्भ पुस्तकें

1. कमेड़ा आखर- बीना बेंजवाल
2. अफु तैं अफ्वी झकोळ जरा- बीना बेंजवाल
2. ग्वथनी गौं बटे- मदन मोहन डुकलाण एवं गिरीश सुन्दरियाल

10.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. 'बिसौणि कु ढुंगु' किसके जीवन-संघर्ष का साक्षी है, और कैसे?
2. इन कविताओं का काव्य सौन्दर्य अपने शब्दों में लिखिए।